Chapter-3

तृतीय अध्याय

प्रसाद और न्हानालाल की विवेच्य कृतियों का परिचय तथा वर्गीकरण

द्वितीय अध्याय में दोनों कवियों की जीवनी और व्यक्तित्व का परिचय एवं निष्कर्ष दिया गया है। प्रस्तुत अध्याय में दोनों की काव्य कृतियों का परिचय दिया जा रहा है। इन काव्य-कृतियों का अलग-अलग अनुशीलन सम्बन्धित कवियों की काव्य-चेतना के अध्ययन में सहायक है, जैसा कि परवर्ती विवेचन से प्रकट है।

प्रसादजी की कृतियाँ :

(१) चित्राधार : प्रथम संस्करण सन् १९१८ तथा द्वितीय संस्करण सन् १९२८ ई०

इस कृति में अनेक विध रचनाओं का समावेश है, जिन्हें संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है।

(अ) आख्यानक कविताएं :

अन्य काव्य के अंतर्गत होने के कारण प्रसाद जी के दोनों चम्पुओं का समावेश इसी श्रेणी में होगा।

(१) उर्वशी :

यह आप का प्रथम चम्पू है जिसका रचनाकाल सन् १९०६ के आसपास तथा प्रकाशन काल सन् १९०९ ई० है। यह प्रसाद जी की प्रथम प्रकाशित कृति है। छह परिच्छेदों के १७ पृष्ठों की एक गद्य-पद्य मयी रचना है। गद्य खड़ीबोली में तथा पद्य ब्रजभाषा में लिखा गया है। पद्य भाग की अपेक्षाकृत इसमें प्रसाद जी की गद्य शैली यथेष्ट परिष्कृत और काव्यात्मक है।

(२) प्रेमराज्य :

प्रसाद जी का यह द्वितीय चम्पू है। इसका रचनाकाल १९०७ के आसपास माना जाता है। उर्वशी की अपेक्षाकृत यह चम्पू अधिक मार्मिक,

भावप्रवण, सुक्तियोक्ति और भाषा की दृष्टि से प्रांजल है । इसमें भी पद्य की अपेक्षा गद्य अधिक ललित परिष्कृत और काव्यात्मक है ।

(३) अयोध्या का उद्धार :

इसकी कथावस्तु कालिदास के " रघुवंश " महाकाव्य के १५ वें सर्ग से ली गई है । किन्तु कथानक योजना की दृष्टि से इसमें प्रसादजी की मौलिक कल्पना का भी योग है, जिससे कथावस्तु में अधिक विश्वसनीयता तथा वैज्ञानिकता आ गई है ।

(४) वनमिलन :

इसकी मूल प्रेरणा भी प्रसाद जी को महाकवि कालिदास से प्राप्त हुई । इसका मूल आधार उनका अत्यन्त कलात्मक नाटक " अभिज्ञान शाकुन्तलम् " रहा है । इस रचना का भावपक्ष कलात्मक और प्रवाहपूर्ण और शैली वर्णनात्मक है ।

(५) प्रेम-राज्य :

इस कृति में पहली-बार प्रसाद जी ने ऐतिहासिक धरातल से अपनी कथावस्तु चुनी । यह कृति पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध दो भागों में विभाजित है । पूर्वार्ध की घटना का संबंध विजयनगर के हिन्दू राजा सूर्यकेतु तथा बहमनी वंश के यवन राजाओं के बीच हुए ई॰ १५६४ में तालीकोट युद्ध से है । उत्तरार्ध में चन्द्रकेतु और ललिता के परस्पर प्रेम और विवाह का वर्णन प्रस्तुत किया गया है । इन दोनों के परिणय से ही " प्रेम-राज्य " की स्थापना होती है ।

(ब) भक्तिपरक रचनाएँ :

" चित्राधार " में संकलित भक्तिपरक कविताओं में ईश्वर के प्रति उनकी श्रद्धा का परिपूर्ण रूप ही व्यक्त हुआ है । महाकवि कालिदास से प्रभावित

होकर अपनी अष्टमूर्ति कविता को उन्होंने " पराग " खण्ड के आदि में " नान्दी " रूप में संग्रहीत किया है । इतर रचनाएं " विनय " " विभो " " शारदीय महापूजन " और " मकरंद-बिन्दु " के अंतर्गत संग्रहीत लगभग १० मुक्तक छंदों तथा समस्त पदों में भी प्रसाद जी की भक्ति भावना का स्वरूप परिलक्षित होता है । प्रसाद जी के चतुर्दश पदों में भी भक्तिकालीन दास्य उपासना, आत्म-निवेदन उपालम्भ एवं अन्य मनोवृत्तियों का चित्रण हुआ है ।[1]

(क) प्रकृति-मूलक रचनाएं :

प्रकृति सौन्दर्य को वे ईश्वरीय रचना का एक बड़ा आधार समझते हैं । इसमें " शारदीय शोभा " के अंतर्गत " प्रभात ", " रजनी ", " चन्द्र " ये तीन कविताएं समाहित हैं । अन्य प्रकृति मूलक रचनाएं - " शरद पूर्णिमा ", " चन्द्रोदय ", "इन्द्र धनुष ", रसाल, " रसाल मंजरी", वर्षा में नदी कूल, नीरद, इन्द्र धनुष, उद्यानलता, प्रभात कुसुम, संध्यातारा है । " मकरंद बिन्दु " के अंतर्गत संग्रहीत लगभग ८-९ मुक्तक छंदों के विषय भी प्रकृति के विभिन्न उपादानों से सम्बन्धित हैं ।

इतर कविताएं :

" कल्पना सुख ", " मानस " तथा " आवै इठलात जलजात-पात को सो बिन्दु " शीर्षक मुक्तक संबोध रचनाएं हैं।[2] " भारतेन्दु-प्रकाश " प्रसाद जी की प्रशस्ति मूलक रचना है, " विदाई " " नीरद प्रेम ", " विस्मृत प्रेम " और विसर्जन - ये चार प्रसाद जी के प्रेम प्रगीत है । " मकरन्द बिन्दु " के अंतर्गत भी प्रसाद जी के कतिपय प्रेमपरक मुक्तक संग्रहीत है । कवि ने अपने प्रेम परक प्रगीतों

१ युग कवि प्रसाद, डा० गणेश खरे, पृ० ४८

२ वही, पृ० ५८

के द्वारा अपने उज्ज्वल कवि-भविष्य की सूचना हमें दी है ।

(२) कानन-कुसुम : के तीन विभिन्न संस्करण मिलते हैं । प्रथम - सन् १९१२ के आसपास का सन् १९१३, द्वितीय - सन् १९१८, तृतीय - सन् १९२९ जिसमें प्रसाद जी की १९०९ ई० से १९१७ ई० तक की केवल खड़ीबोली की रचनाएं संकलित है । वर्तमान संस्करण में प्रसाद जी की कुल ४९ कविताएं हैं ।

विषय की दृष्टि से कानन कुसुम की कविताओं को चार रूपों में विभक्त कर सकते हैं :-

(क) प्रकृति परक (ख) भक्ति और विनय परक
(ग) आख्यानक (घ) स्फुट रचनाएं

(क) प्रकृति परक :

प्रकृति को उन्होंने आलम्बन, उद्दीपन, रहस्य प्रतीक, अलंकरण आदि अनेक रूपों में प्रस्तुत किया है । " ग्रीष्म का मध्याह्न ", " कवि कल्पना ", " बादल आवाहन ", " रजनी गंधा ", " सरोज ", " जल विहारिणी ", " कोकिल एकान्त में ", दलित " कुमुदिनी ", " निशीथ नदी ", " गंगा सागर ", " संध्या ", " नववसंत ", " प्रथम प्रभात " । इन समस्त प्रकृति मूलक रचनाओं में पर्याप्त विविधता है । इनमें मानवीय भावों की व्यंजना करने में अधिक प्रवृत्ति दिखाई देती है । इन कविताओं को हम स्पष्टतः छायावादी युग की पृष्ठभूमि के रूप में ग्रहण कर सकते हैं ।

भक्ति और विनय परक रचनाएं :

" कानन कुसुम " में इस प्रकार की रचनायें संख्या में अधिक हैं । इसका समर्पण भी आध्यात्मिक भावना से युक्त है । इन पर सम्यक् मात्रा में

भक्तिकालीन कवियों के साथ भारतेन्दु हरिश्चंद्र तथा रवीन्द्र का प्रभाव भी वर्तमान है।[1] इसमें ये कविताएं हैं - " प्रियतम ", " प्रभो ", " मोहन ", " महाक्रीडा ", मकरंद बिन्दु का पंचम खंड, वंदना, नमस्कार मंदिर। इनके अतिरिक्त मर्मकथा, करुण क्रन्दन, करुणा कुंज विनय, याचना, पतित-पावन, तुम्हारा स्मरण, विरह, प्रियतम भवसागर, मिल जाओ गले, हृदय वेदना, " कहीं डरते " विनय परक रचनाएं हैं। समग्रतः इन रचनाओं में भक्ति कवि का स्वर न होकर एक श्रद्धालु कवि की विनम्र भावना ही अधिक मुखरित हुई है।

(ग) आख्यानक रचनाएं :

इनके अन्तर्गत प्रथम रचना " चित्रकूट " है जिसकी मूल प्रेरणा राम-चरित मानस का राम-भरत : मिलाप प्रसंग रहा है। चित्रकूट का कथानक तो प्राचीन ही है किन्तु इसमें प्रसाद जी की सर्जनात्मक कल्पना का स्वच्छन्द रूप हमें देखने को मिलता है। कथा में प्रवाह और वर्णन में सरसता के तत्त्व हैं। कतिपय छायावादी तत्त्वों का समावेश भी इसमें मिलता है।[1] अतः इसमें स्वभावतः मौलिकता का गुण परिलक्षित होता है।

कुरुक्षेत्र :

कुरुक्षेत्र के कर्णधार श्रीकृष्ण के जीवन के विभिन्न पक्षों से संबंधित है। इस रचना में कवि की विशेषता श्रीकृष्ण के जीवन से संबंधित उन्हीं पक्षों के चयन में निहित है, जो उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने में समर्थ है। पद्यात्मक कथा कहने की अधिकारपूर्ण शैली भी यहां द्रष्टव्य है।[2]

श्रीकृष्ण जयंती :

यह आख्यानक रचना श्रीकृष्ण के जन्मकाल के पौराणिक इतिहास को

१ युग कवि प्रसाद, डा० गणेश खरे, पृ० ६४
२ वही, पृ० ६५

लेकर प्रस्तुत की गई है। शैली वर्णनात्मक होते हुए भी पर्याप्त मौलिकता से युक्त है।

भरत :

इसकी कथा " अभिज्ञान शाकुन्तलम् " के अंतिम सर्ग भरत-दुष्यंत मिलाप से ली गई है। यह लघु रचना तीन अंकों में विभक्त है। इस रचना में भारत के अतीत गौरव का चित्रण तथा राष्ट्रीय एकता के तत्त्वों का समावेश हो गया है।

शिल्प सौन्दर्य :

यह आख्यानक रचना ऐतिहासिक इतिवृत को लेकर लिखी गई है। इसमें भरतपुर के जाट सरदार सूर्यमल का आलमगीर द्वितीय (सन् १७५४ से १७५९) के दिल्ली दुर्ग पर प्रतिहिंसापूर्ण आक्रमण की घटना का आश्रय लिया गया है। कवि का अतीत शिल्प प्रेम और उसकी व्यापक उदार जीवन दृष्टि भी द्रष्टव्य है। शिल्पकला साम्प्रदायिक नहीं होती, वह तो समान रूप से सभी को प्रभावित करती है।

वीर बालक :

यह रचना भी ऐतिहासिक इतिवृत पर आधारित है। धार्मिक असहिष्णुता के कारण १७०५ ई० में सरहिन्द के सरदार वजीर-खां ने सिक्खों के गुरु गोविन्दसिंह के दो पुत्रों जोरावरसिंह तथा फतहसिंह को जीते जी दीवार में चुनवा दिया था। इस रचना में दोनों वीर बालकों को दीवार में चुनवाते समय का मार्मिक और करुण दृश्य प्रस्तुत किया गया है। रचना छोटे-छोटे आठ दृश्यों

---

१ युग कवि प्रसाद, डा० गणेश खरे, पृ० ६७

में विभक्त है । इस रचना में वीर बालकों की धार्मिक निष्ठा, आत्मिक दृढ़ता, निर्भयता और प्रसन्नता आदि के चित्रण द्वारा भारतीय अतीत गरिमा पर अच्छा प्रकाश पड़ता है ।

भक्ति योग :

इसका कथानक काल्पनिक है । इसमें भक्ति में तन्मय साधक के सामने एक सुंदर युवती उपस्थित होती है और उसकी भक्ति और संयम की परीक्षा करती है । साधक की ईश्वर भक्ति में दृढ़ श्रद्धा है । वह विचलित नहीं होता है । उसकी निष्ठा देखकर युवती हंस पड़ती है । साधक के माध्यम से यहां कवि ने प्रेम को परम पवित्र और जीवन का सर्वश्रेष्ठ तत्त्व बताया है ।

सारांश यह है कि प्रसाद जी की सभी आख्यानक रचनाएं द्विवेदी-युगीन प्रभावों से युक्त होते हुए भी इनमें वर्णन तथा इतिवृत्त के तत्त्व स्वल्प है, भाव एवं वैचारिक प्रसार ही सर्वाधिक है ।

(घ) स्फुट रचनाएं :

इस श्रेणी के अंतर्गत प्रसाद जी की विचारात्मक प्रशस्तिमूलक, राष्ट्रीय आदि रचनाओं का समाहार किया गया है ।

विचारात्मक रचनाएं :

" ठहरो ", " सौन्दर्य ", " रमणी हृदय " तथा " धर्मनीति " ये चार कविताएं हैं । महाकवि तुलसीदास (रचनाकाल १९१४ प्रकाशन- १९२१ ई०) इनकी प्रशस्तिपरक रचना है । इसमें " जीवन में राम " और " राम में जीवन " जीनेवाले तुलसीदास के प्रति सश्रद्धा नमस्कार करते हैं । गान - आपकी राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत रचना है । इसमें आप लिखते हैं कि हमारे देश के वे ही नवयुवक चिरंजीवी और महापुरुष बनेंगे जिनके लिए जन्मभूमि जननी होगी और ईश्वर ही परम पिता होगा । इसमें प्रसाद जी की एक आदर्श राष्ट्र-पुरुष सम्बन्धी

सारी कल्पनायें हमारे सामने प्रत्यक्ष हो जाती है। यह प्रसाद जी की एक सशक्त चतुर्दशपदी है।

(२) करुणालय : प्रथम प्रकाशन सन् १९१२

यह प्रसाद का प्रथम और अंतिम भाव-नाट्य है। यह गीति नाट्य नहीं है क्योंकि इसमें गीतात्मकता का प्राबल्य नहीं है। इसमें भावावेग के साथ ही कथा की गति बढ़ती है। इसमें नौ पुरुष और दो स्त्री पात्र हैं। कथा ऋग्वेद पर आधारित है किन्तु प्रसाद जी ने कथा सूत्रों में यथेष्ट परिवर्तन किया है। इसका कथानक इस प्रकार है :

अयोध्या के राजा हरिश्चन्द्र को एक दिन सायंकाल जल-विहार करते समय नाव स्तब्ध हो जाती है और उसके साथ ही सहसा यह आकाश वाणी सुनाई देती है " यह राजा मिथ्याभानी और पाखण्डी है जिसने सुतबलि का संकल्प करने के पश्चात् भी उसे पूरा नहीं किया, अतः उसके दण्ड स्वरूप नाव अब आगे नहीं बढ़ सकती। " इस पर वे सुतबलि का आश्वासन दे देते हैं। किन्तु जब वे उसके लिए आज्ञा देते हैं तो पुत्र रोहिताश्व जंगल में भाग जाता हैऔर सौ गायों के मूल्य में अजीगर्त के पुत्र शुनःशेफ को ले आया है। पहले तो राजा आज्ञा-भंग के लिए रोहिताश्व से रुष्ट होते हैं किन्तु वशिष्ठ मुनि के समझाने पर शुनःशेफ की बलि के लिए वधिक को आज्ञा देते हैं। करुणा-कातर वधिक का अस्त्र उस पर नहीं उठता। अजीगर्त इसी बीच आकर सौ गायों के बदले इस समस्या के समाधान का आश्वासन देता है। उधर शुनःशेफ आकाश की ओर देख कर परमात्मा से दया की प्रार्थना करता है। इसी बीच विश्वामित्र अपने सौ पुत्रों सहित आकर नर-बलि का तिरस्कार करते हैं और शुनःशेफ को बचा लेते हैं। वहीं उन्हें ज्ञात होता है कि वह वस्तुतः उन्हीं का पुत्र है जिसे उसकी दासी मा ने लोक-विरुद्ध आचरण के कारण अजीगर्त के आश्रम में प्रसव करके छोड दिया था।

प्रसाद जी ने इसी दृश्य में सुव्रता का कथानक कल्पित कर के शुनःशेफ

को विश्वामित्र का ज्येष्ठ पुत्र निरूपित किया है। सुश्रुता एक राजकीय दासी है। विश्वामित्र के तप हेतु हिमगिरि जाने के पूर्व उसका ऋषि से गांधर्व विवाह हुआ था जिसे विश्वामित्र गर्भिणी स्थिति में छोड़कर गये थे। लांछित होने के कारण उसे देश निकाला मिला। तब अनीर्त के आश्रम में पहुंचकर उसने वहां अपना प्रसव प्रतिपालनार्थ समर्पित किया और वह अंतःपुर में दासी बन गई। यज्ञ मंडप में पहुंचकर सुश्रुता इस सारी कथा को विश्वामित्र तथा अन्य लोगों के समक्ष प्रस्तुत करती है तथा दुष्ट अधिक, ऋषि-रूप में चाण्डाल अनीर्त को धिक्कार कर महाराज से न्याय करने की प्रार्थना करती है। विश्वामित्र उसे पहिचान कर पुनः अंगीकृत करते हैं तथा महाराज से उसकी भी दासी रूप से मुक्ति के लिए प्रार्थना करते हैं। महाराज अनीर्त को क्षमा और सुश्रुता को स्वतंत्र करते हैं।

शुनःशेफ का वध करने के लिये वसिष्ट का पुत्र शक्ति आता है, किन्तु उससे यह घोर निष्ठुर कर्म नहीं होता अतः वह शस्त्र फेंक कर बाहर चला जाता है। इसी समय वहां अनीर्त प्रवेश करता है और एक सौ अन्य गायों के बदले वह स्वयं अपने पुत्र की अपने हाथ से बलि देने के लिये तत्पर हो जाता है। इस मार्मिक स्थिति को देख शुनःशेफ हृदय द्रावक स्वर में परम पिता परमात्मा से एक दीन असहाय की बचाने की प्रार्थना करता है। इस करुणोत्पादक वातावरण की सृष्टि के कारण कृति का नाम " करुणालय " रखा गया है, जो कि सार्थक है।

" करुणालय " में धर्म के नाम पर होने वाले पाशविक अत्याचारों की कटु आलोचना मिलती है। प्रसाद पर बौद्ध धर्म की (अहिंसावाद की) बहुत गहरी छाप थी। करुणालय में मानवता का स्वर - क्षमा, दया और परोपकार आदि बहुत स्पष्टता से सुन पड़ता है।

करुणालय प्रसाद जी की उन अधिकांश प्रवृत्तियों का मूल आधार है जिस पर प्रसाद-साहित्य का शिलान्यास हुआ है और आगे चल कर जिसके ऊपर

" कामायनी " के काव्य-भवन का निर्माण हुआ है ।[1]

(४) महाराणा का महत्त्व : प्रथम प्रकाशन १९१४

यह ऐतिहासिक काव्य है । इसकी कथा वस्तु को कवि ने ५ दृश्यों में ही विभक्त किया है । पहला दृश्य पृष्ठभूमि का है । मध्याह्न की मरुभूमि की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने के पश्चात् कुछ सैनिकों के साथ राजकुमार अकबर के सेनापति खानखाना की बेगम को लेकर महाराणा के समक्ष उपस्थित होते हैं जिसे वे यवन रक्षकों से छीन कर वहाँ लाये थे । तृतीय दृश्य में महाराणा के उज्ज्वल चरित्र को प्रकाशित करने वाली वातावरण प्रस्तुत होता है । जलस्रोत के तट पर स्थित प्रताप को सालुम्ब्रापति कृष्णसिंह द्वारा जब यह समाचार मिलता है, तब तत्काल उनके मुख से निकल पड़ता है - " स्त्री को क्षत्रिय देते दुःख नहीं । " तदनन्तर इस कार्य के लिए वे अमरसिंह को फटकारते और बेगम को ससम्मान उसके पति के पास भेजने का आदेश देते हैं । भविष्य में इस प्रकार का कार्य न करने की चेतावनी भी वे अपने सैनिकों को देते हैं । इस चेतावनी में उनकी उदाराशयता, क्षत्रियोचित वीरदर्प तथा उज्ज्वल चरित्र ध्वनित होता है और वस्तुतः यही प्रस्तुत काव्य का मूल प्रतिपाद्य है । चतुर्थ दृश्य में बेगम और खान खाना का वार्तालाप है, जिसमें दोनों के द्वारा प्रताप के महान व्यक्तित्व की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गयी है । अंतिम दृश्य में अकबर के शाही भवन तथा दरबारी शान शौकत का प्रभावशाली वर्णन करके कवि खान खाना को बादशाह के समक्ष प्रस्तुत करता है । अकबर के पूछने पर वे महाराणा के महत्व का सांकेतिक आख्यान करते हुए अपनी ग्लानिपूर्ण मनःस्थिति को व्यक्त करते हैं । वे यह भी कहते हैं कि " राजा आप के राज्य पर कभी क भी आक्रमण न करके अपने छोटे से राज्य से संतुष्ट है । अतः ऐसे सज्जन और उदाराशय को कष्ट देना उचित नहीं है । केवल चुप हो जाना ही आपके शान्ति-घोष के

---

१ कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन, डा० द्वारिका प्रसाद, पृ० ४४

समान है। इस कार्य से आपका यश-सौरभ चतुर्दिक फैलेगा।" अकबर रहीम की यह बात मान कर सेना को अजमेर लौट आने का आदेश देते हैं। इस प्रकार महाराणा के महत्त्व की चरम परिणति के साथ यह रचना समाप्त होती है।

(५) प्रेम पथिक : प्रथम प्रकाशन १९१२

प्रसाद की भाव स्वच्छन्दता का पूर्ण प्रतिनिधित्व करने वाली यह उनकी पहली रचना है। यह भावनामूलक लघु प्रबन्ध है। भावना को आधार मानकर कथा की कल्पना लेखक ने की है। उस कल्पना में प्रतीक के सहारे प्रकृति का आधार ग्रहण कर जीवन के मानवीय प्रेम रहस्य का उद्घाटन करने का आयास किया गया है। संक्षेप में इसकी कथावस्तु इस प्रकार है :-

तपस्वी के आश्रम में बैठा हुआ एक पथिक उसके आग्रह पर अपनी राम कहानी सुनाता है। कभी दो पड़ोसी नदी के किनारे आनंद नगर में रहते थे। एक को लड़की और दूसरे को लड़का था। दोनों हिलमिल कर परस्पर खेलते थे और शाम होने पर उनके माता-पिता उन्हें विलग कर देते थे। प्रभात होते वे पुनः मिल जाते। लड़के का पिता मरते समय लड़की के पिता को थाती के रूप में अपना लड़का सौंप गया था। अब वे खुलकर खेलते थे। अष्टमी के प्रकाश के तारों को भी वे सहज ही गिन लेते थे। जाड़े की रात भी वे बातों में काट लेते थे। उनकी संध्या और प्रभात दोनों क ही आभामय होते थे। एक दिन उसके चाचा ने उसे बताया कि उसकी प्रेयसी पुतली का फलदान जा रहा है। प्रेम का चन्द्रमा मेघ के भीतर छिप गया। हृदय का प्रेम कुचल दिया गया। भग्नहृदय युवक घर छोड़कर चल पड़ा। अब सारा संसार, सारा समाज उसे परदेश प्रतीत होने लगा। हृदय के फफोले आँसू बनकर बह जाते। एक दिन वह शिला पर बैठकर चन्द्रमा को निहार रहा था और उस चन्द्रमा में सल सल रूप में चमेली उसे दीख पड़ी। जिस तापसी को आश्रम में कथा सुनाई जा रही थी वही चमेली थी। चमेली का सौन्दर्य अब विनष्ट हो चुका था। वह लांछिता विधवा समाज से पीड़ित प्रताड़ित

हो एकान्त तपस्या कर जीवन के दिन काट रही थी । जीवन के अतीत के चित्रों ने कल्याण मार्ग में दोनों के चरणों को बढ़ने की प्रेरणा दी । परिणाम यह हुआ कि वे गले गले से नहीं, शरीर शरीर से नहीं, हृदय हृदय से मिले और फिर महा सौन्दर्य के सागर में जहां अखंड शान्ति विराजती है मुक्त हो मिलने की प्रेरणा से आगे बढ़े । उनके तपन की पीत विभा सोने का संसार बनाने लगी । दोनों के सम्मुख अरुणोदय था । " विश्व-आत्मा " का सौन्दर्य उन्हें दीख पड़ा ।

इसका अंत बड़ा प्रतीकात्मक और व्यंजनापूर्ण है । अरुणोदय जहां प्रभात का सूचक है वहां वह प्रेम पथिक किशोर और चमेली के जीवन की नव जागृति और आनंद का भी व्यंजक है ।

(६) झरना : १९१८

झरना प्रसाद जी द्वारा रचित वह काव्य ग्रंथ है जिससे अनेक विद्वान आधुनिक हिन्दी कविता में छायावाद का आरंभ मानते हैं ।[1] इसका प्रथम संस्करण १९१८ ई० में प्रकाशित हुआ था जिसमें कुल २१ कविताएँ थीं । द्वितीय संस्करण का प्रकाशन १९२७ ई० में हुआ । इसमें उनकी ५५ कविताएं संग्रहीत हैं ।

२२ झरना के प्रथम संस्करण से
१२ कानन-कुसुम से
२१ नये प्रणीत सम्मिलित है (उनकी रचना १९१८ और १९२७ ई० के बीच में हुई)

५५

प्रसाद के जीवन काल के चौदह वर्षों की स्फुट रचनाओं का यह संकलन उनके स्वानुभूत भावों का प्रकाशन है जिनमें उनके जीवन के आत्मपरक स्वर

१ डा० सुधाकर पाण्डेय, प्रसाद की कविताएं, पृ० १०९

मुखरित हुए हैं।

इसके संबंध में श्री रामनाथ " सुमन " लिखते हैं[1] :

" झरना स्पष्टतः प्रारंभिक और यौवन की रचना है जब निराशा में भी एक आशा और मन में भी पीड़ा का तीव्र मादक आनंद है। यहाँ यौवन आँसुओं के पानी से आशा की क्यारियाँ सींचता है कि कभी प्रेम की मालती जीवन कुंज पर खिलेगी। यहाँ पीड़ा में भी यौवन का स्वर है। कवि के हृदय में एक ज्वाला है ; पर वह उसे कहाँ ले जायगी इसका ठीक निश्चय वह नहीं कर पाया। झरना में युवक कवि की प्रकृति में रमणीयता देखने और खोजने वाली दृष्टि तो है पर उस दृष्टि में भी प्रश्न की एक रेखा है। उसके हृदय में हलचल है - यह सब क्यों? क्या यह ठीक है? उसका समाधान नहीं हुआ। " झरना " कवि " प्रसाद " का निश्चय Turning point है। कवि जीवन के चौरस्ते पर खड़ा है और सोचता है किधर जायें। उसका झुकाव तो एक ओर है ही फिर सन्देह और शंका होती है। यहाँ कवि के जीवन का एक युग समाप्त होता है। इस अवधि में बीज पड़ा है, उसको सिंचन मिला है, अंकुर निकला है और कोपलें फूटी हैं। इस अवधि में वह एक जमीन में धीरे धीरे अपनी जड़े जमाता है। उसमें आशा का रंग है, यौवन की कोमल बोलने लगी है। पर जीवन के झंझावात में भविष्य अस्थिर है। झरना को देखकर कोई विश्वासपूर्वक नहीं कह सकता कि भविष्य कवि को किधर ले जायगा? या इस झरना के अंक में कौन-सी बेल फूलेगी? "

---

1. कवि प्रसाद की काव्य साधना, पृ० ५९, ६०

झरना में तो उन्होंने प्रिय के अपांगों को देखकर अपने मन की प्लावित स्थिति का स्पष्ट चित्रण किया है। प्रेम की पवित्र परछाईं में ही उसका झरना प्रवाहित हुआ है। प्रथम प्रभात में भी प्रेम तुतीर्थ में सद्यः स्नात होने की चर्चा की गई है। " रूप " में प्रिय का सौन्दर्य चित्रण है। उसके युगल वंकिम भ्रू, घने कुटिल कुंतल, नील नलिन से मद भरे नेत्र, अरुण राग रंजित कोमल हिम खंड से सुंदर गोल-कपोल आदि का वर्णन है। " मनोज में " और " मिलन " इन दो रचनाओं में संयोग शृंगार का चित्रण है। प्रथम में एकान्त में प्रिय मिलन संबंधी दृश्य एवं तज्जन्य अनुभावों की अभिव्यक्ति और दूसरी में आनंद-विभोरता का चित्र। " झरना " की शेष रचनायें भी विरहजन्य स्मृति, निःश्वास अनुनय, उपालंभ और आत्म प्रबोधन से सम्बन्धित है। अकेले निर्जन गृह में क्लान्त हो कवि अपने प्राणधन की " प्रत्याशा " में लीन है। " स्वप्न लोक " में भी उसे अपने प्रिय की मधुर झांकी दिखाई देती है। " कब " में प्रिय से प्रश्न है -

" शून्य-हृदय में प्रेम जलद माला कब फिर घिर आवेगी
वर्षा इन आंखों से होगी कब हरियाली छावेगी। "

" प्यास " में कवि की अतृप्त प्यास का चित्रण है और " बालू की बेला " में निष्ठुर प्रिय से हृदय को पुलकित-प्लावित कर देने का अनुरोध। " चिह्न " में उसके जीवन के विरह-जन्य दीर्घ निःश्वास है और सुधा सिंचित " आशालता " में पश्चात्तापालाप- " सींचकर क्या फल पाया, फूल भी हाथ न आया। " गुलाल सी अभिलाषों की धूल उड़ाने और " सुधा " में गरल " मिलाने के लिये वह प्रिय को उपालंभ भी देता है। " वेदने ठहरो " में कवि वेदना को संबोधित कर इस प्रकार कलह न करने के लिये उससे अनुरोध करता है और " रे मन " में अपने ही मन को समझाता है कि परदेशी से प्रीति करना ठीक नहीं, इससे तो अच्छा निष्ठुर बने रहना है।

प्रेम संबंधी इन रचनाओं में कवि की विरहानुभूतियों की स्वच्छन्द और मार्मिक अभिव्यक्ति है। उनमें प्रेम की एकनिष्ठता, तीव्रता, गहनता और

स्वभाविकता भी विद्यमान है ।

प्रकृतिपरक रचनाएं :

झरना में १५ के लगभग कविताएं प्रकृतिपरक हैं । इनमें प्रकृति का चित्रण, आलम्बन, उद्दीपन, मानवीकरण, रहस्यमूलक और अन्योक्ति के रूप में किया गया है । आलंबन गत चित्रों में किसी न किसी रूप में उद्दीपन के तत्त्व भी आ गये हैं । मानवीकरण की प्रवृत्ति भी सर्वत्र उपलब्ध होती है । प्रसाद जी की प्रेमाकुल भावनाओं से रंजित होने के कारण ये प्रगीत अत्यन्त सजीव और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत हुए हैं । कवि प्रकृति के आन्तरिक सौन्दर्य का उद्घाटन करता है । " हृदय का सौन्दर्य " कविता में उनकी व्यापक एवं सहानुभूतिमयी विचारधारा का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है ।

" देवबाला " और " असंतोष " में भी आपने प्रकृति में एकत्रित सरलता, अनुपम सौन्दर्यशीलता, मानव हृदय की परिमितता तथा उसकी स्वार्थ-परायणता की चर्चा की है । " दो बूंदे " और " वसंत " में प्रकृति का आलंबन रूप में चित्रण किया है । " आया देखो विमल वसंत " में भी वासंतिक सौन्दर्य का चित्रण है किन्तु उसमें मलयानिल के साथ-साथ प्रिय के आवाहन को भी संयुक्त कर दिया है । " होली की रात " के आरंभिक अंश में तारों के फूलों, सौरभ की धूल, तितली के पंखों, कमलिनी की शैया आदि वासंतिक उपकरणों का चित्रण है । यहां होली कब की रात का सारा आलंबन गत चित्र प्रेम-प्रगीत की माधुर्य-पूर्ण पृष्ठभूमि का निर्माण कर देता है । यही वस्तु पाईबाग में भी प्राप्त होती है । आरंभ में सरसों के पीले कानन पर वसंत की कोमल आशा पाकर वृक्षों ने अपने सारे पात सुखा कर गिरा दिये ; और अब वे नये कोमल किसलयों की आशा में खड़े हैं । पतझड का यह मानवीकृत आलम्बन-चित्र जीवंत रूप में प्रस्तुत हुआ है । अन्त में कवि का प्रिय से उसके मन को अपना पाईबाग बना लेने को आत्मनिवेदन है । यहां पतझड का चित्र कवि की विरह-जन्य मनःस्थिति को अच्छी तरह व्यक्त

कर देता है ।

" झरना ", " पी कहाँ? " और आज इस घन की अँधियारी में प्रकृति का उद्दीपनकारी रूप भी कवि की विरहानुभूतियों में मार्मिक अभिव्यंजना में अतीव सहायक हुआ है ।

" पावस प्रभात " में पावसकालीन प्रातःकाल के सौन्दर्य का मानवीकरण रूप में अच्छा चित्रण किया गया है । बिंब के रूप में प्रस्तुत यह प्राकृतिक सौन्दर्य का मानवीय दृश्य अत्यंत भावुक बन गया है । " किरण " में भी आद्यंत मानवीकरण है किन्तु उसमें जिज्ञासामूलक और प्रकृति का रहस्योन्मुख स्वरूप भी स्पष्ट परिलक्षित होता है । प्रसाद जी की यह श्रेष्ठ सम्बोध प्रगीत रचना है जिसमें उनकी कल्पना का प्रशस्त एवं स्वच्छन्द रूप देखने को मिलता है ।

" वसंत की प्रतीक्षा " तथा " दीप " कविताओं में प्रकृति का प्रतीक रूप में चित्रण किया गया है । प्रथम का आशय प्रिया गमन की प्रतीक्षा से है और दूसरी का प्रेम-प्रदीप से है । " सुमन तुम कली बने रह जाओ " में सुमन के माध्यम से कवि प्रेम की अविकसित स्थिति की श्रेष्ठता प्रतिपादित कर रहा है । अतः यहाँ प्रकृति का अन्योक्ति रूप में चित्रण हुआ है ।

इस तरह प्रसाद जी के उपर्युक्त समस्त प्रकृति प्रगीत भावपेक्षित है । इनमें विमुग्धता कम, तन्मयता अधिक है । यहाँ प्रकृति उसके जीवन की अभिन्न संगिनी-रूप में प्रस्तुत हुई है । उसके हर्ष के साथ पुलकित होती है, वेदना में अश्रुविगलित भावों को सुकोमल पृष्ठभूमि प्रदान करती है और अभिव्यक्ति को प्रतीकात्मकता ।[1]

विस्मय और रहस्य प्रगीत :

झरना की लगभग एक दर्जन रचनायें इस श्रेणी के अंतर्गत आती है ।

1 युग कवि प्रसाद, डा० गणेश खरे, पृ० १०२

द्विवेदीयुगीन संस्कारों का इनमें मिलना स्वाभाविक है। " अर्चना ", "स्वभाव ", " अनुनय ", " प्रियतम ", " निवेदन ", " रत्न " आदि रचनाएं इसी श्रेणी की है। " कुछ नहीं " में ईश्वर को सकल निधियों का आधार तथा अखिल विश्व का प्रमाता कहा गया है। वह जब मनुष्य के साथ है तब फिर उसे किस बात की कमी? " आदेश " में बाह्य पूजाचार का खंडन है - " प्रार्थना और तपस्या क्यों, पुजारी किस की है यह भक्ति ? डरा है निज पापों से इसी से करता निज अपमान। " इन रचनाओं पर रवीन्द्रनाथ की गीतांजलि का प्रभाव परिलक्षित होता है। " कहो " तथा " दर्शन " में आराध्य की अनुकम्पा एवं दर्शन के फलस्वरूप प्रसन्न और आह्लादक मनःस्थिति का अच्छा चित्रण मिलता है। " प्रार्थना " में प्राणधन की अपूर्व सौन्दर्य-राशि का चित्र है। कवि प्रार्थना करता है कि मैं जन्मजन्मांतर आपके इसी सौन्दर्य को निरखता रहूं, यही कामना है। " तुम " में उस परमात्मा का विश्व के रोम रोम में रमण करनेवाले रमणीय और मोदमय सर्वात्मवादी स्वरूप की अच्छी अभिव्यंजना की गई है। " खोलो दुवार " में साधक की आध्यात्मिक यात्रा का चित्रण तथा परमेश्वर से उसे अंगीकृत कर लेने की भक्त की प्रार्थना है। " अव्यवस्थित " में मन की चंचलता सांसारिक मोह-माया का आकर्षण तथा ईश्वरोन्मुख कवि की मनःस्थिति का अच्छा चित्रण किया गया है। " विश्व के नीरव निर्जन में " प्रगीत में कवि के मन की चमत्कृति का सशक्त और सांकेतिक रूप में वर्णन है।

स्फुट प्रगीत :

" विषाद " में विषाद नामक सूक्ष्म मनोभावना का मूर्तिकरण करके तज्जन्य अनुभवों का कतिपय सार्थक प्रतीकों की योजना के द्वारा चित्रवत् रूप प्रस्तुत कर दिया गया है। " तुषार की वर्षा " " किसी का सूखा सुहाग " आदि पूर्ण अपूर्ण उपमानों के द्वारा विषाद की सारी विशेषताओं को सांकेतिक रूप से स्पष्ट कर देते हैं। प्रसाद जी सूक्ष्म भावों को मानवीय रूप में प्रस्तुत करने की क्षमता

रखते थे। " धूल के खेल " में बाल्यकालीन क्रीडा और मनोविज्ञान का अच्छा चित्रण किया गया है। अपनी शैशवावस्था में कवि धूल के खेल को ही अतिशय आल्हादक मानता था।

इस प्रकार झरना प्रसाद की रचनाओं में विकास की नयी दिशा का संकेत देता है, जिसमें प्रणय, प्रकृति, स्नेह और छायावादी रचनाओं का संकलन है।

(७) आंसू : १९२६

इसका प्रथम संस्करण १९२६ ई० में प्रकाशित हुआ था। रचनाकाल १९२३-२४ माना जाता है। पहले संस्करण में कुल १२६ छंद थे। द्वितीय संस्करण १९३३ ई० में प्रकाशित हुआ। अपनी विकासशील प्रतिभा के कारण उन्होंने इस संस्करण में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये हैं। इस संस्करण में छन्द संख्या १९० हैं। आंसू की वस्तु योजना विप्रलम्भ शृंगार से आरंभ होकर करुण रस की ओर अग्रसर हुई है जो कि दो भागों में विभक्त है :-

(१) प्रथम में घनीभूत पीडा की सृष्टि है

(२) दूसरे में उस पीडा का दर्शन

" जो घनीभूत पीडा थी, मस्तक में स्मृति सी छाई,
दुर्दिन में आंसू बनकर, वह आज बरसने आई। "[1]

आंसू का यह मंगलाचरण उसकी समस्त आंतरिक विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है। प्रथम भाग के आरंभ में कवि अपने हृदय में उद्दीप्त विकल रागिनी तथा हाहाकार स्वरों में गर्जन करनेवाली वेदना का कारण जानना चाहता है। इस जिज्ञासा का संबंध भी दुर्दिन से जुड जाता है। तत्पश्चात् उसके मानस-सागर के तट पर लोल

1 आंसू, पृ० १४

लहरियाँ अपनी कल कल ध्वनि से कुछ बीती विस्मृत बातें कहती है। अतीत-कालीन मोहमयी क्रीडायें उसकी हृदय-तंत्री को झंकृत कर देती है और फिर वह रो-रोकर, सिसक सिसक कर अपनी करुणार्द्र कथा को कहना प्रारंभ कर देता है। किन्तु कवि प्रेम में हारकर भी अपनी हार स्वीकार नहीं करता, उसके हृदय में प्रिय प्राप्ति-हेतु अभी भी तीव्र भावनाएं उठ रही है और उसे आत्म-विश्वास है कि एक न एक दिन उसका प्रिय उसकी शिथिल आहों से खिंचकर निश्चित ही चला आयेगा।

उत्तरार्द्ध में कवि अपनी वेदना को जीवनी-शक्ति-रूप में ग्रहण करता है। वह लौकिकता से उठकर एक उदात्त भूमि की ओर अग्रसर होता है। अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कवि अपने " स्व " को " पर " में पूर्णतः पर्यवसित कर देता है और सुख से सूखे इस विश्वसदन पर अपने आँसुओं को प्रभात हिम-कण-सा बरसने के लिये मंगल कामना करता है। इस तरह वैयक्तिक विरह-वेदना की सघनता से प्रारंभ होकर " आँसू " अंत में एक उदात्त भूमिका ग्रहण करता है।

आँसू प्रगीतात्मक तत्वों से युक्त एक स्वस्थ, संतुलित और विरह-वेदना को एक नवीन आयाम प्रदान करनेवाली कृति है।[1] इसमें इतनी व्यापक अभिव्यक्ति है तभी आचार्य शुक्ल ने कहा है कि " आँसू में अभिव्यंजना की प्रगल्भता और विचित्रता के भीतर प्रेम वेदना की दिव्य-विभूति का विश्व के मंगलमय प्रभाव का सुख और दुःख दोनों को अपनाने की उसकी अपार शक्ति का और उसकी छाया में सौन्दर्य और मंगल के संगम का भी आभास पाया जाता है। "[2]

श्री इलाचन्द्र जोशी के शब्दों में " प्रसादजी की आँसुओं की पंक्तियों ने हिन्दी जगत् को प्रथम बार उस वेदनावाद की मादकता से विभोर किया जिससे

---

१ युग कवि प्रसाद, पृ० १२७

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ० रामचन्द्र शुक्ल

बाद में छायावादी युग मतवाला हो उठा था । वेदना की भयंकर बाढ़ में सारे युग को परिप्लावित कर देने की जैसी क्षमता " प्रसाद जी " के इन आंसुओं में रही है वह हमारे साहित्य के इतिहास में वास्तव में अतुलनीय है । " प्रसाद " ने जभी में अनन्त सौन्दर्य, अनंत प्रेम और पवित्रता के दर्शन किये थे तभी एक साधक के समान उन्होंने उसके गौरव के गीत गाये हैं ।

(८) लहर : १९३५

" लहर " प्रसादजी की प्रगीतात्मक रस सृष्टि है । इसका प्रथम संस्करण भारतीय भंडार प्रयाग से सन् १९३५ में हुआ । इसमें सन् १९३० से १९३५ तक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाएं दी गई है । इसमें २९ लघु प्रगीत और ४ आख्यानक ऐतिहासिक कविताएं हैं ।

वर्गीकरण : (१) प्रेम परक प्रगीत (२) प्रकृति परक प्रगीत (३) विचारात्मक प्रगीत (४) आत्मपरक प्रगीत (५) वर्णनात्मक और प्रशस्तिमूलक प्रगीत (६) आख्यानक प्रगीत ।

(१) प्रेम परक प्रगीतों :

इनमें प्रेमी की विरह-जन्य व्यथा तड़पन, कसक, क्षोभ आदि विविध मनःस्थितियों की तीव्र अभिव्यंजना से युक्त है । निज अलकों के अंधकार में नामक गीत में प्रिय की लीला विभ्रम, विलास और कुतूहलपूर्ण मुद्रा के चित्रण के साथ उससे यथाशीघ्र आकर चंचल बाहुलताओं से जकड़ जाने की उत्सुक कामना का भी निरूपण किया गया है ।

" वे कुछ दिन कितने सुंदर थे " में अतीत के माधुर्यपूर्ण दिनों की स्मृति है । " तुम्हारी आंखों का बचपन में " प्रिय के हास परिहास सरल, अल्हड़,

१ कवि प्रसाद आंसू तथा अन्य कृतियां, पृ० ११२

क्रीडाओं का स्मरण है। " मेरी आंखों की पुतली में " विरह-संतप्त प्रेमी हृदय की दैन्य, उपालंभ, अनुनय आदि अवस्थाओं का कलात्मक चित्रण है। " अरे कहीं देखा है तुमने " तथा " चिर तृषित कंठ से तृप्त विधुर " - नाम प्रगीतों में कवि की अकिंचन स्थिति अत्यंत दीन अर्थ में व्यक्त की गई है।

(२) प्रकृतिपरक प्रगीत :

" लहर " के प्रकृति परक प्रगीत भी मानवीय जीवन की उदात्त और व्यापक भूमिका पर प्रस्तुत किये गये हैं। प्रकृति जीवन के चरम तत्वों के प्रतीक रूप में प्रस्तुत हुई है। उसका स्वयं का अद्भुत अपूर्व सौन्दर्य तो है ही, पर मानवीय शोभा से युक्त हो वह और अधिक निखर उठी है।

" ऊठ ऊठ री लघु लोल लहर " - " लहर " का नामकरण और प्रारंभ एक प्रकृति विषयक रचना से ही हुआ है। यह एक संबोध गीत है। यहां लहर मानस में उठनेवाली मधुपूरित कामनाओं का प्रतीक है।

" हे सागर संगम अरुण नील " में महागंभीर एक असीम जलधि का चित्रण है किन्तु यह चित्रण में भी प्रतीकात्मक है। सागर युग युग की मधुर कामनाओं के बंधनों को शिथिल करनेवाला निस्सीम परमात्मा का प्रतीक है और पिंगल किरणों-सी मधु रेखा, हिम-शैल बालिका-सरिता ससीम आत्मा की, इन दोनों का मिलन अनंत आनंद का द्योतक है जिसकी प्रसन्नता में सागर फेनिल तरल खील बिखरा रहा है। सागर-सरिता का यह मानवीय रूप और अद्वैत भूमिका पर अलौकिक मिलन इस प्रगीत की मुख्य विशेषता है।

" बीती विभावरी जाग री " जैसे गीत में प्रभातकालीन शोभा का एक सजीव चित्र अंकित किया गया है। उषा-नागरी, तारा-घट, ऊषा-पनघट आदि की रूपक योजना एक गंभीर अर्थ भी प्रदान करती है।

(२) विचारात्मक प्रगीत :

" लहर " में संकलित प्रसाद जी के विचारात्मक प्रगीतों को " उद्बोध " और " संबोध " इन दो रूपों में विभक्त कर सकते हैं । ये दो शैलियां विशेष हैं:

उद्बोध :

" अब जागो जीवन के प्रभात " में कवि ने प्रभातकालीन परिवेश में नव जागृति का संदेश दिया है ।

" रजनी की लाज समेटो तो,
कलरव से उठकर भेंटो तो,
अरुणाचल में चल रही वात । " १

"वसुधा के अंचल पर " गीत में कवि ने मानवीय जीवन की सात्विक व्याख्या करते हुए वसुधा के अंचल पर करुणापूरित अश्रुओं की वृष्टि करने का संदेश दिया है ।

" ओ-री मानस की गहराई " - संबोध गीत है । इसमें प्रसाद जी ने मानस की प्रशान्त गहराई को संबोधित करते हुए उसमें उन्होंने लघु-लघु, सुन्दर-सुन्दर अविरल रूप से सुख लहरें उठाने का संदेश दिया है । अंतिम बंध में उन्होंने समरस भूमिका ग्रहण करने का भी विचार दिया है ।

" हंस ले भय, शोक, प्रेम या रण
हंस ले काला पट ओढ़ मरण
हंस ले जीवन के लघु लघु क्षण
देकर निज चुम्बन के मधु कण
नाविक अतीत की उतराई "२

१ लहर, पृ० २४ (२) वही, पृ० ४२

यही समरस भूमिका अपने व्यापक रूप में " कामायनी " में दिखाई देती है ।

(४) आत्मपरक प्रगीत :

आत्मपरक प्रगीत प्रसाद जी की स्वयं की जीवनगाथा, सुखदुःख, आकांक्षा आदि से सम्बन्धित है । " लहर " में ऐसे प्रगीतों की संख्या तीन है ।

(१) " मधुप गुन-गुनाकर कह जाता कौन कहानी यह अपनी " - गीत में कवि ने पहले जीवन इतिहास कहने की प्रणाली का ही निषेध किया है । फिर अपनी रीती गागर और दुर्बलताओं की कहानी कहना भी उन्हें इष्ट प्रतीत नहीं होता । मधुर चांदनी रातों की उज्ज्वल गाथा को कवि प्रस्तुत भी कैसे करे क्योंकि उसे वह सुख ही कहां मिला, जिसका स्वप्न देखकर उसका प्रेम और यौवन जागृत हुआ था, वह अपनी मौन व्यथा को आत्मकथा कहकर जगाना भी नहीं चाहता । प्रस्तुत गीत प्रेमवंदनी के अनुरोध पर " हंस " के आत्मकथा विशेषांक के लिए लिखा गया था और उसके मुख पृष्ट पर प्रकाशित हुआ था । प्रसाद जी के जीवन में कोई प्रेम घटना घटी थी, इसके अंतःसाक्ष्य-रूप में यह प्रगीत हमेशा उद्धृत किया जाता है ।

(२)"ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे धीरे": - गीत में प्रसाद जी इस कोलाहल पूर्ण अवनि को छोडकर एक ऐसे संसार में जाने की कल्पना करते हैं जो संसार में सुखदुःख से पर एक उदात्त भूमिका लिये हुए है ।

(३) " अरे आ गई है भूली-सी यह मधुऋतु दो दिन को " - प्रगीत में प्रसाद जी ने अपनी वेदना या व्यथा को मधुऋतु के नाम से पुकारा है । उनके जीवन में व्यथा नहता या प्रतीक बन कर नहीं आई लेकिन वह मधुऋतु की भांति नव सुमन का रूप धारण करके आई है ।

(५) वर्णनात्मक और प्रशस्तिमूलक :

लहर में चार प्रशस्तिमूलक रचनाएं हैं :

अरी करुणा की शांत कछार, जगती की मंगलमयी उषा बन, उस दिन जब

जीवन के पथ में, अंतरिक्ष में अभी सो रही है ऊषा मधुबाला ।

ये सभी कविताएं बौद्ध धर्म की करुणा से प्रभावित होकर लिखी गई हैं । भगवान बुद्ध ने धर्मचक्र के प्रवर्तन द्वारा युग युग की मानवता को जो कल्याण और मुक्ति का संदेश प्रदान किया था, उसी की गूंज इन कविताओं में सुनाई पड़ती है । वर्णनात्मक रचनाएं चार हैं :-

(१) अशोक की चिन्ता
(२) शेरसिंह का शस्त्र समर्पण
(३) पेशोला की प्रतिध्वनि
(४) प्रलय की छाया

(१) " अशोक की चिन्ता " कलिंग-विजय से उत्पन्न पीड़ा को आधार बना कर लिखी गई है । इस रचना द्वारा भुनती वसुधा और तपते जग पर स्नेह की करुणा बरसाई गई है और संसृति की मंगल कामना की गई है ।

(२)"शेरसिंह का शस्त्र समर्पण": - यह रचना प्रयोगवादी रचना के आधार पर है । इसमें राष्ट्रीयता की भावना को ऐतिहासिक आधार पर उद्दीपन किया गया है ।

जलियानवाला बाग ऐतिहासिक राष्ट्रीय स्थल है । वहां अंग्रेजों और सिक्खों का युद्ध हुआ था । छलकर एक सिक्ख सेनापति लालसिंह अंग्रेजों से मिल गया और उसने छल कपट किया । बारूद के गोले की जगह काठ के गोले डाल दिये और बारूद की जगह आटा रख दिया । जिसके फल स्वरूप सिक्खों की हार हुई । शेरसिंह को हथियार डालने पड़े । इस योद्धा ने सतलज तट पर वृद्ध योद्धा श्यामसिंह को सिक्खों की गौरव गाथा का गान करते हुए स्मरण किया । यहां चेतना संदेश देती है, राष्ट्र प्रेम में युद्धभूमि पर मृत्यु प्रणयनी के बाहुपाश और पयोधरा मां की गोद से अधिक महत्त्वशाली है । [१]

(३) "पेशोला की प्रतिध्वनि": यह भी एक प्रयोगवादी अतुकांत अमात्रिक रचना है । उसमें मेवाड़ की अतीतकालीन गौरव गरिमा की याद की गई है और वर्तमान

००००००००००००००००००००

१ प्रसाद की कविताएं, सुधाकर पाण्डेय, पृ० २०५

कालीन जीवन पर क्षोभ व्यक्त किया गया है ।

गंभीर राष्ट्रीय उद्बोधन का अमर संदेश जीवन की प्रेरणा से प्लावित होकर कवि दे रहा है ।

(४) " प्रलय की छाया " - यह लहर की अंतिम रचना है । सन् १९३१ में " हंस " में प्रकाशित हुई थी । अंतर्द्वन्द्वों और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का गंभीरतापूर्वक उपयोग और प्रयोग कर प्रसाद जी ने " प्रलय की छाया " की रचना की है । रमणीय रूप और यौवन की पल पल परिवर्तित भावनाओं को सुन्दर प्रतीकों के माध्यम से चित्रित करने का प्रयत्न ऐतिहासिक कथावस्तु के आधार पर कवि ने किया है ।[1]

इसमें गुजरात की रानी कमलावती के जीवन का चित्र अंकित किया गया है । सन् १२९६ में अपने चाचा जलालुद्दीन खिलजी की हत्या कर अलाउद्दीन दिल्ली का राजा बना । सन् १२९७ में उसके दो सेनापतियों - उलुगखां और नुसरतखां - ने गुजरात पर आक्रमण कर वहां के राजा कर्ण वाघेला को परास्त किया । गुजरात दिल्ली राज्य में मिला लिया गया । कमला कर्ण की अनुपम सुन्दर रानी थी । उसके अंतःकरण का विश्लेषण ही कविता का मूल प्रतिपाद्य है । इतिहास की घटनाओं में विशेष परिवर्तन न करते हुए उन्होंने कमला के हृदय के अंतर्द्वन्द्व को काफी तटस्थता से अंकित किया है । प्रसाद ने कमला से उसके भूल भरे कर्म का पश्चाताप करा कर उसके लांछन को बहुत कुछ धो दिया है ।[2]

(५) कामायनी : प्रथम संस्करण १९३६

कामायनी की आधारभूत कथा तो अत्यंत लघु है । परंतु प्रसाद जी ने अपनी उर्वर कल्पना द्वारा उसे विस्तृत रूप प्रदान किया है । उसकी संक्षिप्त

१ प्रसाद की कविताएं, सुधाकर पाण्डेय, पृ० २०६

२ प्रसाद : समीक्षात्मक ग्रन्थ, निर्मल तालवार, पृ० १६०

रूप-रेखा इस प्रकार है।

एक भयंकर जल-प्लावन के कारण संपूर्ण देव सृष्टि नष्ट हो जाती है क्योंकि वह पूर्ण विलासिता में डूबी हुई थी। उसमें से केवल मनु शेष रहते हैं। उनकी नौका एक बड़ी मछली का चपेटा खाकर उत्तर में हिमगिरी पर आ पहुंचती है। मनु इसी स्थान पर उतर पड़ते हैं। जल-प्लावन के उतर जाने पर पहले वे शालियां बीन कर पाक यज्ञ करते हैं। तदुपरांत उनकी भेंट एक परम सुन्दरी युवती से होती है जिसका नाम श्रद्धा है। यह निराश, व्यथित एवम् किंकर्तव्यविमूढ मनु को आशा, दृढता एवं कर्तव्य कर्म करने का संदेश देती है तथा मनु के लिये अपना जीवन समर्पित करती हुई पशुपालन, कृषि आदि कार्यों द्वारा मानव सभ्यता के प्रारंभिक वस्तुओं का संग्रह करती है। इसी समय प्रलय के कारण भटकते हुए आकुलि-किलात नामक दो असुर पुरोहित मनु के समीप आते हैं और मनु से पशु बलि द्वारा भिन्नावरण यज्ञ कराते हैं। इस हिंसा कार्य से श्रद्धा रुठ जाती है और वह मनु को इस कार्य से छुड़ाने का भरसक प्रयत्न करती है। परंतु मनु आलेट आदि में लीन रहकर इस कार्य को नहीं छोड़ते। इसी बीच में श्रद्धा गर्भवती हो जाती है और वह अपनी भावी सन्तान के लिये उनी वस्त्र, सुंदर कुटीर आदि का निर्माण करती है। मनु श्रद्धा के इन सभी कार्यों को अपने प्रणय-सुख में बाधक समझते हैं। अतः उनके हृदय में गर्भस्थ शिशु के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न होती है।[1] और वे गर्भवती श्रद्धा को छोड़कर चले जाते हैं।

यहां से चलकर मनु उजड़े हुए सारस्वत नगर में पहुंचते हैं। इस नगर की रानी इड़ा से उनकी भेंट होती है और वह मनु को अपने नगर का शासक नियुक्त करके उन्हें नगर की उन्नति और व्यवस्था करने का कार्य भार सौंपती है। मनु अपने प्रयत्नों द्वारा नगर की पर्याप्त श्रीवृद्धि करते हैं। परन्तु अपनी वासना की

---

1 कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन, डा० द्वारकाप्रसाद, पृ० 11

तृप्ति के लिए वे नगर की रानी इडा के साथ अनैतिक व्यवहार करने के लिए उद्यत हो जाते हैं। इसके परिणाम स्वरूप समस्त नगर में जन क्रान्ति मच जाती है। देवता भी कुपित हो जाते हैं और मनु तथा उनकी प्रजा में घमासान युद्ध होता है। प्रजा का नेतृत्व करनेवाले आकुलि-किलात है। मनु सब से पहले इन दोनों असुर पुरोहितों का वध करते हैं, परंतु अंत में प्रजा से पराजित होकर वे घायल दशा में पृथ्वी पर गिर पडते हैं।

इधर पुत्रवती श्रद्धा विरहिणी के रूप में अपना जीवन व्यतीत करती है। परन्तु एक रात को उसे मनु से सम्बन्धित उक्त दुर्घटना स्वप्न में दिखाई देती है और वह अपने कुमार मानव को साथ लेकर खोजती-खोजती उसी स्थान पर आ पहुंचती है, जहां मनु मूर्च्छित पडे हैं। सेवा सुश्रूषा से मनु ठीक हो जाते हैं; परंतु ग्लानिवश फिर वे एक रात को श्रद्धा के पास से भाग जाते हैं। प्रातः होते ही श्रद्धा अपने पुत्र को इडा की शासन-व्यवस्था संभालने के लिए वहीं सारस्वत नगर में छोड जाती है और मनु को खोजने चल देती है। मनु निकट ही सरस्वती नदी के किनारे तपश्चर्या करते हुए मिल जाते हैं। श्रद्धा को आते ही मनु को नटराज शिव के दर्शन होते हैं और वे उनके चरणों तक ले चलने के लिए श्रद्धा से आग्रह करते हैं। श्रद्धा उनका पथ-प्रदर्शन करती हुई मार्ग में त्रिपुर या त्रिकोण का रहस्य समझाती है। इस त्रिपुर में इच्छा, ज्ञान और क्रिया नामक तीन शक्तियों से सम्बन्धित भावलोक, ज्ञानलोक और कर्मलोक है जो अलग-अलग रहने के कारण अपूर्ण है। इसके बाद श्रद्धा अपनी मधुर मुस्कान से इन तीनों लोकों का समन्वय कर देती है, जिससे समस्त विश्व में मनु को दिव्य नाद सुनाई पडता है, उनके स्वप्न जागरण आदि नष्ट हो जाते हैं और वे श्रद्धा सहित तन्मय होकर अखण्ड आनंद प्राप्त करते हैं। जिस स्थान पर मनु को यह आनंद प्राप्त होता है, उसे कैलाश गिरि कहा गया है। कुछ कालों के उपरांत इडा तथा कुमार मानव भी अपनी समस्त प्रजा को लेकर कैलाश की यात्रा करने आते हैं। यहां आकर श्रद्धा तथा मनु से उनकी भेंट होती है और सभी

एक संयुक्त परिवार के सदस्य बन जाते हैं। सभी के हृदयों से भेद-भाव की भावना निकल जाती है तथा सभी समरसता को प्राप्त करके अखंड आनंद में मग्न हो जाते हैं।

कामायनी की इस कथा का विश्लेषण करने पर इसके चार भाग प्रतीत होते हैं :-

(१) जलप्लावन तथा मनु (२) मनु श्रद्धा का मिलन और उनका गृहस्थ जीवन (३) मनु-इडा मिलन तथा सारस्वत नगर की दुर्घटना (४) मनु की कैलाश यात्रा तथा तत्त्वदर्शन।[१]

कामायनी की कथा द्विअर्थक है क्योंकि एक ओर तो इसमें श्रद्धा एवं मनु का ऐतिहासिक उपाख्यान है और दूसरी ओर मन, बुद्धि और हृदय के क्रमिक विकास का रूप दिखलाते हुए मानवता के विकास का भी निरूपण किया गया है।[२] साथ ही इसके अधिकांश पात्र सांकेतिक है क्योंकि मनु तो स्पष्ट ही मननशील संकल्प युक्त एवं अहंभाव में लीन रहने के कारण अहंभाव युक्त मन या चेतना के प्रतीक है। श्रद्धा हार्दिक विश्वास भाव से परिपूर्ण होने के कारण हृदय की प्रतीक है। इसे शुक्लजी ने विश्वासमयी रागात्मिका वृत्ति कहा है।[३] परन्तु विश्वास एवं राग वृत्ति का सम्बन्ध भी हृदय से होने के कारण वह हृदय का ही प्रतीक सिद्ध होती है। इडा को प्रसाद जी ने मस्तिष्क या बुद्धि का प्रतीक बतलाया है। नन्ददुलारे वाजपेयी का मत है कि प्रसाद जी ने बुद्धि का विरोध न करके बुद्धिवाद की अति का विरोध किया है।[४] अतः इडा बुद्धिवाद की अति को जन्म देनेवाली " तर्कशीला बुद्धि " का प्रतीक है। आकुली और किलात तामसी प्रवृत्तियों की प्रबलता के कारण आसुरी प्रवृत्तियों के प्रतीक है। इस प्रकार कामायनी एक रूपकत्व महाकाव्य है।

१ कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन, डा० द्वारिकाप्रसाद, पृ० ५८
२ कामायनी, आमुख, पृ० ७
३ हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ६५०
४ जयशंकर प्रसाद, नन्ददुलारे वाजपेयी, पृ० ८५-८६

सर्वप्रथम जीव अन्नमय कोश में उत्पन्न होता है और क्रमशः उन्नति करता हुआ अपनी सतत साधना से आनंदमय कोश तक पहुंच सकता है। कामायनी में प्रसाद जी ने भी अहंभाव युक्त मन को नाना कोशों में विचरण करने के उपरांत अन्त में आनंदमय कोश में पहुंचाने का प्रयत्न किया है।[1]

यह प्रसाद जी की अंतिम रचना है।

प्रसाद संगीत :

" प्रसाद संगीत " का प्रकाशन भारती-भंडार प्रयाग से सं० २०१२ में हुआ है। इन कविताओं का संकलन श्री रत्नशंकर प्रसाद ने किया है। प्रसाद के नाटकों के गीतों एवं चतुर्दशपदियों का यह संकलन है। यह स्तुत्य कार्य अपना महत्त्व रखता है। यह कृति काव्य के क्षेत्र में एक अभाव की पूर्ति करती है। इसमें नाटकों में आयी ११९ कविताएं तथा २१ चतुर्दशपदियां है। नाटकों में भी २ चतुर्दशपदियां हैं। ये रचनाएं सन् १९१० से सन् १९३५ तक की है।[2]

नाटकों के गीत :

प्रसाद ने अपने नाटकों में भी गीतों का प्रयोग किया है। प्रसाद के नाटकों की रचना सन् १९१० से आरंभ होती है और १९३३ में समाप्त होती है। इस प्रकार नाटकों के गीत २३ वर्ष की अवधि में लिखे गये हैं।

प्रत्येक नाटक के गीतों का विवरण :-

(१) विशाख : सन् १९२१

इसमें प्रायः संभाषण में पद्य और गीतों का प्रयोग हुआ है। नाटक का आरंभ ही अतीत स्मृति के गान से होता है। इसमें प्रणय और प्रकृति सम्बन्धी

१ कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन, डा० द्वारकाप्रसाद, पृ० १९७

२ प्रसाद की कविताएं, सुधाकर पाण्डेय, पृ० ३१२

गान है। गीतों से ही स्वगत-कथन का भी काम लिया गया है। उपदेश भी गीतात्मक है। विशाख की कविताएं सामान्य है। इनमें ११ कविताएं विभिन्न छन्दों में हैं।

(२) अजातशत्रु (१९२२ ई०)

इसमें आरंभ भी गीतों से होता है। इनमें अधिकांश गीत व्यक्तिपरक है जिनमें जगत की नश्वरता प्रणय की तीव्र वेदना, दुखिया के आंसू संगीत के स्वर नृत्य के ताल पर है। भाव, भाषा और शैली सभी दृष्टियों से गीत अच्छे हैं। समस्त कविताओं की संख्या २१ है।

(३) कामना (सन् १९२४)

एक रूपक है जिसकी प्रधान पात्रा कामना भावमय गीतों द्वारा परिचय-गान, " करुणा " का वर्णन विहर, हृदय की शीतलता, विनोद लीला, विलास लालसा, प्रकृति सब का वर्णन करती है। ये कविताएं विभिन्न भावों से सम्बन्ध जोडने में सहायक है। ये कविताएं बडी रसीली है। इनकी संख्या २९ हैं।

(४) जनमेजय का नागयज्ञ : (सन् १९२६)

छायावादी गीत पद्धति पर नृत्य और स्वरमय भावनाओं वाला राष्ट्रीय गीत भी इसमें है। इसके गीत देश प्रेम और राष्ट्रीयता से पूर्ण है। परमसत्ता का वर्णन भी है, प्रेम की जय भी है। उद्बोधन गीत भी लिखे हैं। इस प्रकार विविध रूप रस गंधवाले गीत जनमेजय के नागयज्ञ में हैं। इसमें कुल १० कविताएं हैं।

(५) स्कन्द गुप्त : (सन् १९२८)

इसमें मदभरे शृंगार गीत है। मातृगुप्त भावुकता से भरे हुए गीत

गाता है। देवसेना संगीत को प्राण-सा मानती है। स्कन्दगुप्त में देवसेना के गान संगीत की राग रागिनियों में बंध कर जीवन दर्शन की भावभूमि पर उतारे गये हैं। साथ ही वे मिलन और विरह की घनीभूत व्यंजना की संगीतमयी अभिव्यक्ति भी करते हैं। देशप्रेम के गीत भी कवि ने सशक्त स्वर में सुनाए हैं। आर्य गौरव की गाथा भी कवि ने उपस्थित की है। जीवन में आनंद का आदर्श भी इन गीतों में है।

(६) चन्द्रगुप्तः (सन् १९३१)

इस नाटक के गीत अपने स्थान पर श्रेष्ठ है। यौवन के पूर्ण उपकरण पूर्ण रूप से इन गीतों में चित्रित है जैसे माधुरी कुंज, कोकिल के बोल, फलवाली कम्पित रात आदि। प्रणय गीत भी है। गीतों में स रहस्यात्मकता भी है। सांस्कृतिक राष्ट्रगीत भी है।[1] इसमें कुल १६ गीत हैं।

(७) ध्रुवस्वामिनी : (सन् १९३४) की रचना है। इसमें दर्शन प्रधान कविताओं की आलोक भरी सरस सृष्टि है। इन गीतों में विराग की, मंगल की, प्रकृति की आदर्श वाणी निखरी है। इनमें शृंगार का पूर्ण निखार है। इसमें केवल चार गीत है।

एक घूंट की ४ तथा राज्यश्री की ६ कविताएं भी प्रसाद संगीत में है।

उपसंहार :

रचना शिल्प की दृष्टि से ये गीत नई भावभूमि की स्थापना करते हैं। इनमें भावनाओं के अनुरूप विविध छंद है। इनके गीतों में भावोच्छ्वास की गंभीर विह्वलता है। यह विह्वलता विशृंखल नहीं अनुभूति के गंभीर मनोविश्लेषण

१ प्रसादनी की कविताएं, सुधाकर पाण्डेय, पृ० २१२

पर आधारित है। प्रेम और प्रणय जन्य समस्त सूक्ष्म भावों का सरस और गंभीर रूप में वर्णन किया है। इन गीतों में भावों की मृदुता के साथ साथ कवि के व्यक्तित्व की मौलिक छाप है। इन गीतों में छायावाद का काव्य कौशल अपने चरम उत्कर्ष पर मिलता है। इन गीतों में प्रसाद का गंभीर चिंतन है, जीवन का दर्शन है। भावनाएं चित्रमय, ध्वनिमय, रसमय होकर अपनी मूर्त सत्ता स्थापित करने में सफल हुई हैं। अनेक गीत राष्ट्र, राष्ट्रीयता और मानवता से सम्बन्धित हैं। प्रसाद जी पूर्ण भारतीय और सांस्कृतिक व्यक्ति थे। उनके राष्ट्रीय गीतों में अंतर की ध्वनि एक गंभीर संस्कार निष्ठ चिंतक की भांति व्यक्त हुई है। प्रसाद अप्रतिम राष्ट्रीय कवि भी हैं।[1]

प्रेम पथिक में (१९०९ ई०) " पथिक धीर-धरि चलिए पथ अति दूर, हवे कटिबद्ध सदा स्नेह में चूर " लिखने वाले ने गन्तव्य ही नहीं, अपितु पथ तक पहुंचने की दूरी को भी माप लिया था। तभी तो " धीर-धरि " " स्नेह में चूर " कटिबद्ध रहने का आदर्श बना।[2]

प्रेम पथिक से कामायनी तक की यात्रा का अनुभव लोक के सम्मुख मनु के मुख से इस प्रकार रखा गया :-

अपनी दुर्बलता बल सम्भाल,
गन्तव्य मार्ग पर पैर धरे,
मत कर पसार निज पैरों चल
चलने की जिसको रहे झोंक,
उसको कब कोई सके रोक।[3]

---

१ प्रसाद की कविताएं, सुधाकर पाण्डेय, पृ० २१९

२ रत्नशंकर प्रसाद, प्रसाद संगीत, पृ० ३

३ जयशंकर प्रसाद, कामायनी, पृ० १७८

कवि न्हानालाल की विवेच्य काव्य कृतियाँ

कवि न्हानालाल की काव्य-कृतियों का रचनाकाल प्रसाद जी से लगभग पंद्रह वर्ष पूर्व आरम्भ होता है। परिमाण तथा संख्या की दृष्टि से वे प्रसाद जी की कृतियों की तुलना में अधिक हैं। इसका कारण भी स्पष्ट है कि गुजरात का यह यशस्वी कवि को प्रसाद की अपेक्षाकृत अधिक दीर्घ जीवी रहा। दोनों की काव्य-कृतियों के सर्वपक्षीय तुलनात्मक अध्ययन के लिए यहाँ कवि न्हानालाल की काव्य कृतियों की विषय वस्तु का संक्षिप्त अनुशीलन प्रस्तुत किया जा रहा है।

(१) राजपूतानी काव्यत्रिपुटि : १९०२

इसका प्रथम प्रकाशन सन् १९०२, १९०५, १९०८, १९११ में हुआ था। दूसरा प्रकाशन सन् १९२२ में और तीसरा प्रकाशन सन् १९२१ में हुआ था। इस संकलन में " राजमहाराज एडवर्ड मे, राज युवराज मे, राज राजेन्द्रने अर्पे राजगीतों " इस प्रकार चार प्रकार की काव्यकृतियों का संकलन है।

सप्तम एडवर्ड (१९०२) तथा दो बार पंचम जार्ज (१९०५ तथा १९११) के भारत में आगमन के तीन प्रसंगों से संबंधित कवि के प्रथम तीन काव्य इस संकलन में हैं और " रणगीतों " (युद्ध गीत) तो अलग अलग ऐतिहासिक प्रसंगों पर लिखे गये हैं। ये नाटकों से एकत्रित किये गये वीर रसपूर्ण गीत है। संक्षेप में संकलन में व्यष्टि की भावनाएं न होकर समष्टि की भावना है। जैसा कि विषय-वस्तु के संक्षिप्त परिचय से प्रकट है कि प्रारंभिक तीन खण्ड एक प्रकार से भारतीय गौरव के अनुभव के साथ-साथ कवि की राजभक्ति को अभिव्यक्त करते है, किन्तु " रण-गीतों " में वीरोल्लास-भरी प्रेरणा जागृति उत्पन्न करने वाले १२ गीतों की रस-पूर्ण धारा प्रकाशित है।

(२) केटलाक काव्यो भाग-१ : (१९०२)

इस काव्य-संकलन का प्रथम प्रकाशन सन् १९०२ में हुआ था। और द्वितीय बार प्रकाशन सन् १९२८ में। इसमें कुल ५४ गीत है।

(१) आमंत्रण :

इस गीत में कवि ने निसर्ग की प्रेम वाटिका में प्रभुता करने के लिये समस्त मानव जाति को आमंत्रित किया है। प्राकृतिक सौंदर्य के प्रभाव से आत्मा, परमात्मा की दिव्यता का भी इसमें संकेत है।

(२) आवाहन :

कवि ने इस गीत में परम पिता परमात्मा का आह्वान किया है। हृदयरूपी अंगना स्वच्छ करके भावों की तीव्रता से कवि ने प्रभु को बुलाया है।

(३) किरीट :

इस गीत में कवि ने शैशव की स्मृति और वयःसंधि का वर्णन कर अपनी शैशवकालीन सखी की स्मृति में भावनाओं के मुकुट का आलेखन किया है।

" ऊंडी भावनाओं जीवन्त रहेशे " में यह बतलाया है।

(४) हालरडुं :

इस गीत में सौभाग्यवती स्त्री अपने पति को भावपूर्ण शैली में याद करके बुलाती है और कहती है कि "मैं मेरा पूर्ण भावपूर्ण हृदय तुम को समर्पित कर चुकी हूं।"

(५) स्मरण :

कवि ने यह गीत सिरछत्र पिता की याद में उनके निधन पर लिखा है। पूज्य पिता के निधन के बाद कवि को सर्वत्र शून्यता लक्षित होती है और भावावेग में वह भी मृत्यु की सर्वोपरिता स्वीकार करके भूमा का मूल्यांकन करता है।

(६) प्रभात :

इस गीत में कवि ने बतलाया है कि प्रेमी अपनी प्रियतमा की मोहक आँखें निहार कर आकर्षित होता है। उसकी तीव्र माधुर्य भावनाओं से प्रभावित होता है। उसके हृदय में प्रणय का आनंद प्राप्त करानेवाला प्रियतम है। इसमें प्राकृतिक दृश्य का प्रणय-परक प्रतीकात्मक निरूपण है जो कि आधुनिक हिन्दी काव्य की छायावादी काव्य-शैली की भाँति है।

(७) वेदर्शन :

इस गीत में कवि ने मधुर आदर और दीनता का सांकेतिक भाषा में वर्णन किया है।

(८) लग्नतिथि :

इस गीत में कवि ने अपनी लग्नतिथि वैशाख शुक्ल पंचमी को पहली थी वह प्रतिवर्ष मनाते थे। उसका भावपूर्ण पति पत्नी की निर्मल एकता और एकरूपता का वर्णन किया है। कवि ने इसमें प्रेम के व्याज से व्यापक जीवन की झांकी प्रस्तुत की है।

(९) विस्मरण :

इस गीत में कवि अपनी पत्नी से कौन कौन से प्रसंगों पर मूल्ना

और कौन कौन से प्रसंगो पर याद करना यह सूचित करता है ।

(१०) वियोग :

इस गीत में स्नेह वियोग की अचूक ध्वनि प्रतिध्वनि होती है । वियोग की गाढ विषाद छाया के नीचे मानवीय हृदय में निहित प्रणय की भावनाओं का भावपूर्ण चित्रण है, प्रेयसी के मुख पर रसानुभाव की तृप्ति और उससे प्रेरित आत्मा की प्यास की शाँति । कितनी आदर्श कल्पना है ।

(११) पंखीडां :

इस गीत में कवि पंछीओं का स्वागत करता है और कहता है मेरी चांदनी में आओ और मेरी प्रियतमा का कोई संदेश लाये हो तो मुझे सुनाओ ।

(१२) गुलाब की कली :

इस गीत में कवि ने गुलाब की कलि और पवन के माध्यम से प्रिय और प्रियतमा की झकझोर मस्ती का वर्णन किया है, अंत में गुलाब के विकसित पुष्प के माध्यम से सौरभ के विकास की ओर भी संकेत किया है ।

(१३) बहेननुं गीत :

इस गीत में लग्न करने के लिये जानेवाले भाई के प्रति उसकी सगी बहन की तीव्र और भावपूर्ण भावनाओं की चित्रोपम व्यंजना की गई है इसके भाव और शब्द मधुर है ।

(१४) धण :

इस गीत में अहीर, गायों और भैसों के समूह को जंगल में चराने के लिये ले जाता है उसका वर्णन है । साथ-साथ जंगल के प्राकृतिक सौंदर्य का पंछिओं

के कलरव का और ग्वाल लोग बंसरी बजाते हैं उसका वर्णन है ।

(१५) जन्मतिथि :
oo-ooo-ooo-oo

इस गीत में कवि अपनी जन्मतिथि किस प्रकार मनाते है उसका वर्णन है । वर्ष भर में जो बुरे काम किये हो उसका प्रश्चाताप अच्छे कार्यों का मूल्यांकन और आगामी वर्ष में विकासशील और सत्कार्यों में लीन रहे यही परमपिता परमात्मा से प्रार्थना की है ।

(१६) पधरामणी :
oo-ooo-ooo-oo-oo

इस गीत में कवि ने अपनी पत्नी को " सखी " शब्द से संबोधन करके पत्नी का स्वागत कैसे भावपूर्ण रीति से करना चाहिये यह बतलाया है । इसमें नारी के माधुर्य भाव की महत्ता है ।

(१७) पत्र वांचन :
oo-ooo-ooo-oo

इस गीत में कवि ने यह लिखा है कि कवि पत्नी अपनी सखी से उसने अपने प्रियतम (कवि) को जो पत्र लिखा था उसका वर्णन है । इसमें भावुकता माधुर्य और प्रेम का सुंदर आलेखन है ।

(१८) रसजीवन की फांसी :
oo-ooo-ooo-ooo-ooo-oo

इस गीत में स्त्री के रस और माधुर्यपूर्ण जीवन का मूल्यांकन किया गया है । स्त्री से स्नेह और मधुर भावना पा कर पुरुष भाग्यशाली बनता है । ऐसी रस जीवन की फांसी इसमें व्यक्त की गई है ।

(१९) भमरो :
oo-ooo-ooo-oo

इस गीत में प्रातःकाल की श्री शोभा का वर्णन है और खिले हुए कमल के फूलों से भ्रमर की क्रीडा बतलाई है । अंतिम पंक्तिओं में लोगों को उपदेश

दिया है कि " सुखमां उन्मत्त न थईए " ।

(२०) सन्देशो :

इस गीत में कवि ने अपनी प्रियतमा को यह संदेश भेजा है कि "प्रणयनी बालिकाना देवदर्शन क्यां थाशे? " और अंत में अपनी आत्मसमर्पण की भावना बड़ी तीव्रता से व्यक्त की है ।

(२१) सिन्धुने :

इस गीत में सरोवर के माध्यम से प्रियतमा अपने प्रिय को लहरों की गर्जना द्वारा अपना संदेश भेजती है और कहती है कि मुझे मेरे प्रिय की आंखों का दर्शन करा देना । सरोवर की सुन्दरता के साथ मानव भावनाओं का सामंजस्य भी है ।

(२२) धीर समीर :

इस गीत में धीर समीर समीर(पवन) बदला है उसका कवि ने चित्रमय वर्णन किया है । यह मंद मंद पवन किस किस को प्रभावित करता है यह बतलाया है ।

(२३) आशा :

इस गीत में कवि ने प्रेमी की तीव्र इच्छा प्रेमिका के दर्शन के लिये व्यक्त की है । यह उसकी दर्शन की आशा है ।

(२४) गभरूछ :

इस गीत में प्रेम और माधुर्य के भाव हृदय में भरे हैं उससे प्रेमी अपनी प्रेमिका का स्वागत करना चाहता है । उसका बहुत हिस्सा अंग्रेजी काव्य का

अनुवाद हैं ।

(२५) सुन्दरीनुं पारणु :

इस गीत में कवि ने नारी के मातृत्व रूप का मूल्यांकन किया है । टैनिसन कवि की " Princess " काव्य का अनुवाद इसमें है ।

(२६) मातानां दर्शन :

इस गीत में भी कवि ने माता की वात्सल्य भाव का दिव्य मूल्यांकन किया है । माता का यह वात्सल्य भाव पवित्र, दिव्य और सराहनीय है ।

(२७) चेतन :

इस गीत में कवि ने मानव जीवन में जो कुल- चेतना रूप आत्मा है उसीका मूल्यांकन किया है वह रस चेतन, भाव चेतन, और पूर्ण चेतन है ।

(२८) प्रेम सरोवर :

इस गीत में प्रिया अपने प्रियतम को प्रेम सरोवर के पास ले जाना चाहती है । प्रेम सरोवर से संबंध प्रेमिका के हृदय के कोमल और मधुर भाव है ।

(२९) तादात्म्य :

इस गीत में पति और पत्नी का तादात्म्य बताया गया है । शरीर से द्वैत है लेकिन मन से अद्वैत ।

(३०) रमणीय मुंझवण :

इस गीत में नायिका के रूप सौंदर्य का भावपूर्ण वर्णन है । नायिका अपनी सेज पर निद्राधिन है, मान्य नायिका जग जाती है और नायक उसके पास खडा है । थोडी देर के बाद नायिका जग जाती है और दोनों प्रेमालाप करते हैं, नायक

की नायिका को जगाने की बडी रमणीय गुंफवण थी ।

(२१) सरोवर :

सौराष्ट्र में शेत्रुंजा पर्वत का शिखर है उसकी गहराई में छोटा सरोवर है उसके प्राकृतिक सौंदर्य का कवि ने वर्णन किया है । वह सरोवर निर्मल, गहन और सुंदर दिखता है । यह भाव कवि ने बतलाया है ।

(२२) मणिमय सैंथी :

स्त्री के सिर में जैसे माँग रहती है उस प्रकार से प्रेम का रास्ता माँग की तरह सीधा सादा और चमकीला होता है । इसमें कवि ने अपनी पत्नी माणेक बहन के सौभाग्य का मूल्यांकन किया है ।

(२३) क्षितिजनी पाणे :

इस गीत में क्षितिज पर चंद्रोदय का दृश्य दिखता है उसके सौंदर्य का वर्णन किया है ।

(२४) चन्द्रिकाने :

कवि चन्द्रिका को संबोधन करके कहते हैं कि " ऐ चन्द्रिका तू अपने प्रकाश से आँग्ल देश को प्रभावित करना । आँग्ल देश प्रकाश शून्य है उसे प्रकाश से भर देना ।

(२५) राज महाराज एडवर्ड ने :

न्हानालाल के समय में भारत देश परतंत्र था । अंग्रेजों का राज्य था इसलिये कवि ने एडवर्ड सप्तम को राज महाराज कहकर उनके मान्यतापूर्वक दिव्य गुणों का मूल्यांकन किया है ।

(२६) वीरांगना :
ooo—ooo—ooo—ooo

इस गीत में स्वाभ्नी वीरांगना के शौर्य और साहस का कवि ने मूल्यांकन किया है ।

(२७) अमारा स्नेह :
ooo—ooo—ooo—ooo—oo

यह गीत व्यक्ति परक है । कवि ने इस गीत में कवि और उनकी पत्नी माणेक बहन के प्रेम-माधुर्य और प्रेम भावना का वर्णन किया है ।

(२८) चैत्र शुद त्रीज :
ooo—ooo—ooo—ooo—oo

इस गीत में कवि ने चैत्र शुक्ल तृतीया जो वसन्त ऋतु में ही पडती है उसका वर्णन किया है । उस दिन प्रातःकाल के समय का एवं सायंकाल के समय का वर्णन किया है । प्रातःकाल का प्रभात कवि ने " वात्सल्य श्री विभु प्रभा " कही है ।

(२९) मूक व्यर्थ याचना :
ooo—ooo—ooo—ooo—ooo

कवि परम पिता परमात्मा से याचना करता है कि " प्रभो म्हारे सृष्टि शुद्ध थवुं छे "

" सृष्टि विशुद्धिमांथी स्वर्ग शुद्धि
प्रभो म्हारे ऊगववी छे ।
प्रभु म्हने शुद्धिविधान करावो "[१]

कवि ने इस याचना को व्यर्थ कहा है क्योंकि मन माया मोह में फंसा रहता है इसलिये यह याचना अस्वीकृत रहती है ।

———————————

१ केटलाक काव्यो, भाग १, पृ० ६२

(४०) काल :

इस गीत में नायिका अपने नायक से कहती है कि आज वनमें वसंत का स्वागत करना है इसलिये फूल कल चुनेंगे ।

(४१) श्वेतांबरी सन्यासिनी :

इस गीत में कवि ने एक श्वेत वस्त्र पहनी हुई वियोगिनी की मनोव्यथा का वर्णन किया है,उसका पति उसका त्याग करके चला गया है, उसकी तीव्र और मर्म स्पर्शी व्यथा है । उसका पति लौटकर आये इसलिये वह शिवपूजन आदि भी करती है वह सरस्वती नदी के किनारे रहती है ।

(४२) पुनरुद्धार :

इस गीत में कवि ने परमात्मा के प्रति अपनी भावनाएं व्यक्त की है । माया मोह के बन्धन में पडे हुए मनुष्य का वह पुनःउद्धार करता है ।

(४३) पारणं :

इस गीत में यह बतलाया है कि बच्चे बडे हो जाने के बाद पालना बडा सूना पड जाता है,वह सूना पालना अच्छा नहीं लगता,वह अप्रिय लगता है ।

(४४) अवसान वेला :

नायिका के निधन के समय नायक उसके पास खडा है और बडी तीव्र उदासता से अपनी मनोव्यथा व्यक्त करता है यह इसमें बतलाया है । नायक की मनोव्यथा का बडा मर्मस्पर्शी चित्रण है ।

(४५) श्रावणी अमावस :

यह एक दुःखपूर्ण लघु गीत है । इसमें कल्पना का प्राधान्य है ।

कवि रात्रि के किनारे खडा था, साथ में उसका भाई भी था। तारों खचित रात्रि का वर्णन है। प्रभु की दिव्यता और शक्ति का अनुभव किया। इतने में विमान आया, दोनों भाई बैठे, फिर एकाएक भाई अदृश्य हो गया। कवि ए अकेले ही रहे, एक गंभीर शब्द सुनाई दिया। कवि के मुंह से शब्द फूट पडे " प्रभो "।

(४६) सान्ध्य तेज :

इस गीत में अंग्रेजी काव्य Light and Evening का अनुवाद है यह गीत Christian Life Edi:3 1990 में छपा है। सायंकाल के धीर गम्भीर वातावरण के माध्यम से कवि परम पिता की याद करता है।

(४७) सागरने :

इस गीत में कवि ने सागर का मानवीकरण करके उसकी महत्ता का यशोगान किया है। इस शक्तिशाली सागर के रचयिता परमपिता परमात्मा है। सागर को देख कर ईश्वर की महत्ता की प्रतीति होती है।

(४८) जीवनना वर्षे :

इस गीत में कवि जीवन किस प्रकार क्रम क्रम से समाप्त होता है यह बताते हुए जीवन में उच्च आदर्शों की स्थापना के बारे में संकेत किया है। जीवन का लक्ष्य भव्य, प्रेमपूर्ण, और पवित्र बतलाया है।

(४९) घंटारव :

कवि की जीवनी और कृतियों पर आंग्ल कवि टेनिसन की काफी असर पडी थी। यह गीत टेनिसन का काव्य In Memorium के १०६ खंड का भावपूर्ण अनुवाद है। इस गीत का आशय यह है कि बडी दिव्यता से

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
THE M.S. UNIVERSITY OF BARODA
151

निर्मति घंटे की आवाज की तरह कहती है कि " मनमें से दुर्गुणों को हटाकर तू सद्गुणों को जगह दे। मानव तू पवित्र और दिव्य बन जा।

P|Th 3106

(१०) ब्रह्मदीक्षा :

कवि ने अपने भ्राता के निधन पर यह शोक गीत लिखा है। उसने संसार को त्याग कर ब्रह्म दीक्षा ली है। अब उसका वहां से लौटना असंभव है। कवि ने इस शोक गीत में भ्रातृभाव की दिव्य और प्रेमपूर्ण भावनाएं व्यक्त की है।

(११) विनोदने अभिलाष :

इस गीत में कवि ने प्रेमी और प्रेमिका के वार्तालाप के माध्यम से विनोद और अभिलाष व्यक्त किये हैं। इसमें मौलिक विनोद भी है और भविष्य की अभिलाषाएं भी है।

(१२) वांछना :

इस गीत में कवि भक्त की भूमिका पर खडे होकर यह प्रार्थना करता है कि " प्रभो प्रभामृत की सुधा कहां छिपेगी। कवि अपने आपको चातक कहता है। और प्रभु को स्वाती नक्षत्र का पानी कहता है इसमें हृदय की सच्चाई और भावों की तीव्रता है।

(१३) अहालेक :

इस गीत में भी कवि ने यह बतलाया है कि " मैं तेरे द्वार पर कब से बडी तीव्रता से पुकार रहा हूं " लेकिन तू सुनता ही नहीं है " इसमें प्रभु को प्राप्त करने के लिये हृदय के तीव्र भावों का वर्णन है।

(१४) अनुभवमाळा :

इस अंतिम गीत में कवि अपने अनुभवों का अपने दुःख सुखों का वर्णन

करना नहीं चाहता । उसे मौन ही उचित लगता है ।

गीतों का वर्गीकरण :

(१) प्राकृतिक सौंदर्य परक : गीत क्रमांक ११–१२–१४–१५–२२–३१–३३–३४–३८–४६–४७ – (११)

(२) नियति परक : गीत क्रमांक १–२–२७–३५–४२–४५–५२–५३ – (८)

(३) मानवता परक : गीत क्रमांक ३–३६–४८ – (३)

(४) दाम्पत्य भावना परक : गीत क्रमांक ४–८–९–१३–१६–२५–२६–२९–३२–३७–४३ – (११)

(५) प्रणय परक : गीत क्रमांक ६–७–१०–१८–२०–२१–२३–२४–२८–३०–४०–४१–४४–५१ – (१४)

(६) व्यक्ति परक : गीत क्रमांक ५–१९–१७–३९–४९–५०–५४ – (७)

कुल गीत : ५४ चौवन

(२) वसन्तोत्सव – (१९०५)

कवि न्हानालाल की प्रतिभाशाली डोलन शैली की यह सर्व प्रथम कृति है । इसकी प्रथम आवृत्ति सन् १८९८ और १९०५ में हुई । इसमें स्वयंभू प्रणय की कथा है, जिसकी परिणति विवाह में होती है । इस कथा-काव्य में दो प्रेमी युगलों की कथा है एक युगल है रमण और सुमणा । दूसरा है सौभाग्यचन्द्र और देहलग्न की विधवा विलसु । कवि का इसमें समाजसुधार का दृष्टिकोण है ।

सारांश :

विकसित फूल की तरह बालिका सुमणा तथा रमण दोनों परस्पर होते हैं और आत्म-लग्न कर लेते हैं । लेकिन संसार की सामाजिक पुस्तक में उनका कोई महत्त्व नहीं है । कवि को यह मान्य है और उनके प्रति उसमें पूर्ण सद्भाव है जिसका उसने आलेखन किया है । शिशु अवस्था से उनका विकसित प्रेम लग्न की

चरम सीमा पर पहुंचता है । इन दोनों में प्रणय की मस्ती, उत्कटता, आवेग और भावों की तीव्रता का पग-पग निदर्शन होता है । प्रणय की तीव्रता में इन दोनों को " स्पर्श " और " स्नेह " एक ही प्रतीत होते है । इस प्रकार उनका प्रणय जीवन प्रवाह गतिशील रहता है अंत में रमण सुभगा को लग्न जीवन के बाद में धार्मिक उदात्त मार्ग के प्रति प्रेरित करता है ।

दूसरी कथा विलसु और सौभाग्यचन्द्र के अंतर में भी प्रेम का प्रभाव और तीव्रता से सम्बन्धित है । तेजस्वी सौभाग्यचन्द्र को वसन्त का गीत गाती देहलग्न की विधवा विलसु के प्रति मार्मिक आकर्षण होता है और वह विलसु को यही समझाता है कि " देहलग्न की विधवा को प्रेम लग्न ही मुक्ति है । इस प्रकार इन दोनों के मन में समान भावों का उद्रेक तथा उन्मत्तता उपर्युक्त कथा की भांति ही है ।

कवि ने अपनी इस कृति में प्रणय का विशुद्ध भाव से चित्रण किया है । इस प्रणय के आलंबन में विरह, दर्द, अथवा जीवन की गहन करुणता निहित नहीं है । कवि को उसकी आवश्यकता भी नहीं लगती । स्नेह को समाज के रीतरिवाज तहस नहस कर डालते हैं । इसका उद्घाटन करके कवि ने स्नेह के प्रति सामाजिक अन्याय की भीषणता अंकित की है । स्नेह निर्मल आत्मभावना का सौरभ है, अंत में स्नेह की भावना से निकृत परितृप्ति मानव सेवा में है, यह कवि का चरम लक्ष्य है । इसमें यही कल्याणकारी ध्वनि है और इसकी लोकप्रियता ही उसकी पूर्ण प्रतीति का प्रतीक है ।[१]

(४) केटलाक काव्यो भाग-२ : (१९०८)

इस काव्य संकलन का प्रथम प्रकाशन १९०८ में हुआ था जिसमें अलग अलग २९ गीत हैं । ये इस प्रकार हैं :-

---

१ धनवंत शाह, कवि न्हानालालनी कवितामां व्यक्त थतुं जीवन दर्शन, पृ० ८७ पर आधारित

(१) वेदना प्रभो :

इस गीत में कवि महान सत्ता नियति से मिलना चाहता है, किन्तु बीच में माया मोह का बड़ा व्यवधान है। आत्मा अभेद, और अक्षय को प्राप्त करना चाहता है। वह प्राप्त नहीं कर सकता अतः उसे तीव्र वेदना होती है। फलतः वह रोता है। मनुष्य में अज्ञान और माया-मोह की तीव्रता होने से वह उसे प्राप्त नहीं कर सकता इस काव्य में हीन हृदय की तीव्रता और आर्द्रता भी निहित है। कोई अच्छा संत प्राप्त हो तो उसे उस महान सत्ता की झांकी कराये तो उसको सौ सौ वंदन करने को भी कवि तैयार है। इसमें कवि की भरत के रूप में तीव्र पुकार है।

(२) नयणांनी धार :

कवि के अंतर में सनातन ज्योति के दर्शन की तीव्र लालसा जागृत हुई है। दर्शन के अभाव में आत्मा में जो टीस, वेदना और तडपन है कवि ने भावपूर्ण शैली में अपनी तीव्र भावुकता व्यक्त की है। " नयणां मारां नीतरे " यह पंक्ति कवि की तीव्र वेदना की द्योतक है।

(३) झीणा झीणा मेह :

बाल्यावस्था समाप्त करने के बाद युवावस्था प्राप्त होती है और मन में उद्दाम वासनाएं जागृत होती है। इस गीत में उसका वर्णन है। इस गीत में कवि ने हृदय की तीव्र भावनाओं का आलोडन विलोडन बतलाया है। इसमें युवावस्था की मीठी उलझनों का वर्णन है। वर्षा की तरह स्नेह भी टपकता है। और युवावस्था रूपी चुंदडी भींग जाती है।

(४) ए रात :

यह भी एक प्रणय गीत है। वसंत के आगमन के साथ प्रिय मिलन

की जो तीव्र इच्छा हृदय में जागृत होती है । और उसके अभाव में जो वेदना और उत्कर्ष का अनुभव होता है इसका भावपूर्ण वर्णन है ।

(५) यौवना :
oo—ooo—ooo—oo

विचार मग्न, अपने में ही खोई हुई प्रणय से परास्त किसी युवती की मार्मिक मनोदशा का इस गीत में चित्रात्मक वर्णन है । इसमें कवि ने युवावस्था का भी वर्णन किया है ।

(६) विवेचन :
ooo—ooo—ooo—oo

इस गीत में कवि ने बतलाया है कि आत्मा विषय वासना की तीव्र मादकता से त्रस्त और सचेत होकर उससे शीघ्र मुक्त होने के लिए लालायित है । इस प्रकार की आत्मा की तीव्रता का इसमें भावपूर्ण वर्णन है ।

(७) वेण :
oo—ooo—oo

इस गीत में भी कवि ने आत्मा की तीव्र आंकाक्षा की अतृप्ति के कारण वेदना का मनोभाव व्यक्त किया है । पूर्व दिशा में ऊषा का अखंड सौभाग्य लेकर आकाश खड़ा है । मनुष्य उस परब्रह्म को पुकारता है । प्रारब्ध, विधात्री, देवी, सब के पास अनेक प्रकार की दीनवाणी उसे मिलने के लिये कही है । लेकिन कोई उत्तर नहीं अतः कवि निराश हो कर कहता है,

" वेण मारुं नंदवाणु "[१]

वेदना असफलता और अतृप्ति का आलेखन इसमें हुआ है ।

(८) अद्भुत सुंदरता :
oo—ooo—ooo—ooo—oo

इस गीत में सौंदर्य का मूल्यांकन शील और संयम से है, यह बतलाया

oooooooooooooooo

१ केटलांक काव्यो, भाग-२, पृ० २१

है । भारतीय स्त्री की लज्जा और संयम उसके दिव्य अलंकार है । यह बतलाया है इससे उसका सौंदर्य जो पवित्र और आकर्षक है ; निखर उठता है ।

(९) हृदयनी वात :

इस गीत में प्रणय की तीव्र मंखना और आवेग व्यक्त हुए है । प्रणय सृष्टि सर्जन का एक बड़ा महत्त्वपूर्ण सोपान है । यह कवि ने ऐसे प्रणय के प्रति मंगल श्रद्धा व्यक्त की है । वह उसकी तीव्रता में अपनी प्रेमिका को बुलाता है और इसमें उसके अंतर की ऋजुता है । कवि अपनी प्रियतमा से मिल कर अपना मन की सब बातें कहना चाहता है । इसमें आंतरिक तीव्र वेदना की अभिव्यक्ति है ।

(१०) आमंत्रण :

इस गीत में भी कवि प्रणयी-हृदय को आमंत्रण देता है । मिलन की तीव्रता आकांक्षा के कारण नायिका अपने नायक को मिलने के लिए आमंत्रण देती है । जीवन रूपी जमुना के किनारे मिलने का संकेत है । इसमें मिलन से उत्प्रेरित उल्लास और उमंग है ।

भावपूर्ण पंक्ति " व्हालानी जोतुं हुं जल तीर वाट "[1] इसमें सहजीवन का माधुर्य और प्रसन्नता का भावपूर्ण चित्रण है ।

(११) ए दिवसो :

इस गीत में विरहिणी नायिका का बड़ा मार्मिक और भावपूर्ण वर्णन है । विरह की तीव्रता में वह पागल-सी बन गई है । उसको संयोग की मधुर स्मृतियाँ बहुत याद आती है । प्रत्येक पंक्ति में विरह का बड़ा गहरा चित्रण किया है ।

१ केटलाक काव्यो, भाग-२, पृ० १२

(१२) आंसुना भेद :

इस गीत में कवि टेनिसन की काव्यकृति " घी प्रिन्सेस " की काव्य कृति का भावपूर्ण अनुवाद है। स्त्री का हृदय सहज सरल और भावुक होता है वह अपने अंतर में अनेक प्रकार के आंसुओं की निधी रखती है। इस गीत में इसीका वर्णन है। इस गीत में स्त्रीओं के हृदय की निष्ठा, कोमलता और कोमलता का परिचय प्राप्त होता है।

(१३) माफ करने वाला :

इस गीत में नायक नायिका से सदैव के लिये विदा चाहता है। वह उसे संयोग की बातें भूल जाने के लिये कहता है। वह कहता है " मेरा रास्ता अलग है " नायक विदा के समय जो भावनाएं व्यक्त करता है उसका भावपूर्ण वर्णन किया है।

(१४) म्हारूं पारेवुं :

इस गीत में कवि ने अपने अंतर की जागृति के प्रति निर्देश किया है। संसार की माया जाल में आत्मा का जो प्रभाव कवि ने खो दिया था वह उसे वापस चाहिए इसमें आत्मा की तुलना ~~कबूतर~~ कबूतर के साथ की है। कबूतर की तरह आत्मा शांत, कोमल, निर्मल और निर्दोष है। इसमें आत्मा की तीव्र वेदना झलकती है।

(१५) सारसनो शब्द :

इस गीत में मही नदी के किनारे स्थित युगल के सौंदर्य एवं उनकी आनन्द मग्नता का चित्रण है न उसकी मधुर ध्वनि और स्थल का प्राकृतिक सौंदर्य कवि को प्रभावित करते है जिसे उसने भावपूर्ण और चित्रोपम शैली में प्रस्तुत किया है।

(१६) लग्न गीत :
०००-०००-००-०००

इस गीत में लग्न प्रसंग का उल्लास और आनंद व्यक्त किया है। यह आर्य संस्कार की सुंदर भावना और उसके सामाजिक महत्त्व को अभिव्यक्त किया गया है।

(१७) लग्न गीत :
०००-०००-०००-००

१६ वें गीत की अपूर्ण भावनाओं की पूर्णता इस गीत में निर्दिष्ट है। इस गीत में उल्लास का आवेग प्रथम गीतसे भी तीव्रतर है। गृहस्थाश्रम की तुलना जीवन-सूर्य के उदय के साथ की है।

(१८) गीत :
००-०००-०००-००

इस गीत में कवि ने दाम्पत्य मांगल्य की शुभ भावनाएं व्यक्त की है। इसमें पुरुष और स्त्री को एक-दूसरे का पूरक बनकर रहने का आदेश है।

(१९) सौभाग्यवती :
००-०००-०००-०००-००

इस गीत में सौभाग्यवती नायिका अपने नायक की तीव्र प्रतीक्षा में रत है। उसका वर्णन है। नायिका अपने हृदय की सहज सरल भावनाएं व्यक्त करती है। साथ में उद्दीपन के रूप में प्राकृतिक सौंदर्य का भी वर्णन है। संपूर्ण काव्यकृति अनुपम है।

(२०) पुनर्लग्न :
००-०००-०००-००

कवि की अपनी दृढ मान्यता और प्रतीति थी कि " आपणे लग्नतिथि उजवी जाइये "। इस आधार पर प्रतिवर्ष लग्नतिथि के शुभ दिन कवि को अपनी पत्नी माणेक बहन से " पुनर्लग्न " होता था। इसमें कवि ने लग्न दाम्पत्य की महिमा गाई है।

(२१) वर्धमान पुरी :
ऊ००-०००-०००-०००

इस गीत में कवि ने अपनी जन्मभूमि वर्धमान पुरी जिसे हाल वढवाण कहते है । उसके प्रति अपनी भावनाएं व्यक्त की है । इसमें कवि ने अपना वतन प्रेम भावपूर्ण शैली में व्यक्त किया है ।

(२२) आपणी जन्मतिथि :
००-०००-००-००-००-०००-००

इसकी विषय-वस्तु बीसवें गीतकी भाँति ही है ।

(२३) विलासनी शोभा :
००-०००-०००-०००-००-००

इस गीत में कन्या, सौभाग्यवती और विधवा नारी के विकास के इन तीन सोपानों को कथा-सूत्र के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हो जो इस प्रकार है :- भावना रूप पृथ्वी लोक से तीन युवतियां आकाश में गई और अपनी अपनी इच्छा के (अनुसार) स्वरूप लेकर चंद्रिका में खेलने लगी - कुमारी ने स्वर्ग गंगा का रूप लिया, सौभाग्यवती ने विकसित चन्द्रिका का रूप लिया और विधवा ने टिमटिमाती तारिका का रूप लिया और प्रत्येक अपने अपने मन की बातें परस्पर कहने लगीं । इस प्रकार तीनों की बातचीत के माध्यम से इस गीत में स्नेह, शील, पवित्रता, का आदर्श बतलाया है ।

(२४) इस गीत का शीर्षक " कोयल " है, इसमें कवि ने कोयल का मधुर वाणी से कूकना, उसकी मधुर वाणी की प्रतिध्वनि का जंगल में फैलना, आम की डाली पर बैठना आदि चित्रोपम भाषा में वर्णन किया है । कवि को कोयल की मीठी वाणी अति प्रिय है । इसे प्रकृति प्रेम -परक गीत कह सकते हैं ।

(२५) इंग्लैंडना कुलवास :
०००-०००-०००-०००-००००

आंग्ल कवियित्री Mrs Hinmess का काव्य "Homes of England"

काव्य का यह अनुवाद है । इस गीत में इंग्लैंड की गौरवगाथा मार्मिक और चित्रोपम ढंग से गायी गई है ।

(२६) स्वदेशनी दाझ :

इस गीत में कवि ने आंग्ल उपन्यासकार Dr. Scott की कविता "Breathes there the man with soul so dead" का अनुवाद किया है लेकिन मूल कविता की जैसी गति और प्रभाव इसमें लक्षित नहीं होता ।

(२७) राजपुत्रराजने सत्कार :

कवि ने ज्यार्ज प्रिन्स आफ वल्स के भारत आगमन पर (९ नवम्बर, १९०५) उनके सम्मान में यह गीत लिखा था ।

(२८) राजवीर :

इस गीत में राजवीर का सुंदर वर्णन किया है । इसमें काव्य कला और चित्रकला का समन्वय है । उसमें प्राकृतिक सौंदर्य का भी वर्णन है । यह पूरा गीत वीररस पूर्ण और भावपूर्ण है ।

(२९) वीरनी विदाय :

इस गीत में युद्ध में जाते समय प्रियतम को उसकी प्रियतमा जिस प्रकार प्रेरणा देती है उसका वीरोचित भाषा में वर्णन है । यह राजपूतानी शौर्य से भरा हुआ विदा गीत है ।

(३०) जिंदगीना पडछाया :

यह गीत Select Hymns के एक स्रोत का अनुवाद है । उसका केन्द्रीय भाव (१) आशावादिता (२) संघर्षमय जीवन (३) परिस्थितियों से और दुःखों से ऊपर उठकर जीवन जीना यही बतलाया है । मानव का मूल्यांकन न्याय, सत्य और दया के कारण ही होता है ।

(११) जल :

इस लघु गीत में प्रभु मिलन की तीव्र आकांक्षा व्यक्त की है। मानव प्रभु से आलम्बन मांगता है। इसमें भावों की अभिव्यक्ति और प्रभु के प्रति दीनता का आदेश है।

(१२) प्रेमनो संसार :

यह गीत बंगाली गीत का अनुवाद है इसमें कवि ने परमात्मा का प्रेम का संसार उसके रोम रोम में व्याप्त हो ऐसी तीव्र आकांक्षा व्यक्त की है। अंतिम पंक्तियों में पूर्ण रूप से आत्म समर्पण की भावना व्यक्त की है।

(१३) धर्मरायना पार्षदने विदाय :

इस गीत में कवि ने परमपिता परमात्मा के प्रति अपने भाव और भक्ति व्यक्त किये है। मानव हृदय वामन (छोटा) है औ, ईश्वर महान है। अतः उसने परमात्मा के प्रति बड़ी तीव्रता से प्रार्थना की है। इसमें कवि की दीनता आर्द्रता और भक्ति की सौरभ निहित है।

(१४) जोगीओना बाळ :

इस गीत में वैराग्य की तीव्रता और मस्ती का वर्णन किया गया है।

(१५) गिरनारने चरणे :

कवि ने सन् १९०४ में गिरनार की यात्रा के समय यह काव्य लिखा था। इसमें कवि ने एकशिला पर बैठ कर गिरनार के वर्णन के साथ साथ भारत के दिव्य अतीत का और भारतीय संस्कृति का भी वर्णन किया है।

(१६) सिन्धु तीरे :

यह गीत बंगाली गीत का अनुवाद है। इसमें भक्त हृदय की आर्द्रता

और तीव्रता व्यक्त की गई है। पिता के पास उसका पुत्र दीनता से प्रार्थना करता है कि उसका जीवन अच्छे ढंग से विकसित हो।

(१७) स्तुतिनुं अष्टक :

इस काव्य में भी कवि ने परमपिता परमात्मा की शिशुभाव से वंदना की है। इसके साथ ही कवि ने परमात्मा के विराट दर्शन का भी परिचय देकर उसकी सर्वशक्ति महत्ता बतलाई है।

(१८) हरीनां दर्शन :

इस गीत में भी कवि की परमात्मा के प्रति तीव्र औत्सुक्य और वेदना भरी भावना अंकित होती है। संसारिक मोह-माया में बंधा हुआ मनुष्य ईश्वर को भूल जाता है लेकिन ज्ञान होने पर वह उससे मिलना चाहता है। इस गीत में परमात्मा के मिलन की तीव्रता व्यक्त की है और यह गीत-भक्ति भावपरक और वेदनापरक है।

विश्लेषण करने पर ज्ञान होता है कि इस काव्य संकलन में आत्मपरक गीत ३ (क्र० २०-२१-२२); प्रणयपरक गीत - १२ (क्र० २-४-५-८-९-१०-११-१३-१६-१७-१८-१९-२३); निवृत्तिपरक गीत - १० (क्र० १-३-६-७-१४-२३-२४-२५-२६-२९); अनुवादपरक गीत - ६ (१२-२५-२६-३१-३२-३७); वीरतापरक गीत -२ (क्र० २८-२९); राज्य परक -१ (क्र० २७) और प्रकृति परक - २ (क्र० १५-१६) हैं।

चित्र दर्शनो (सन् १९२१ ई०)

उन्नीस काव्यात्मक रेखा-चित्रों का यह संकलन पूर्ववर्ती अन्य कृतियों की अपेक्षाकृत अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। विषय वस्तु के दृष्टिकोण से ये पांच प्रकार के हैं :-

(१) काल्पनिक - १- शरद पुनम २- सौभाग्यवती ३- लग्नोत्सव।

(२) प्रशस्ति-परक – ४– श्रीमन्त महाराजा स्याजीराव गायकवाड

५– सौराष्ट्रनो साधु

६– महर्षि दयानन्द सरस्वती

७– गुजरातनो तपस्वी

(३) जीवनगत प्रसंग – ८– पितृ-तर्पण   ११– श्रावणी अमास

९– कुल योगिनी   १२– ब्रह्म-दीक्षा

१०– गुरुदेव

(४) प्रादेशिक वैशिष्ट्य तथा गौरव-संबंधी :

१३– गुजरात   १६– गुर्जरी कुंजो

१४– काठियावाडीनुं गीत   १७– गुजरातपाळआण

१५– पारसवाडिया

(५) वैचारिक और ऐतिहासिक – १८– राजवीर

१९– ताजमहल

उपर्युक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि ये शब्द-चित्र अधिकांशतः कवि की भावुकता से ही सम्बन्धित हैं। इनकी मूल प्रेरणा प्रायः भारत की और विशेषतः गुजरात की सांस्कृतिक मनीषा अथवा उसके गौरवमय अतीत के सांस्कृतिक पक्ष ही रहे हैं। काल्पनिक शब्द-चित्रों के तीनों गीतों में प्राकृतिक दृश्यों के माध्यम से मानव का प्रेम और सौन्दर्य अभिव्यक्त हुआ है। इनमें प्रकृति के मानवीकरण के साथ-साथ प्रतीक-योजना की सुन्दर छटा दृष्टिगोचर होती है। इन तीनों में प्राकृतिक सौन्दर्य की अपेक्षाकृत नव-यौवना नारी के कायिक सौन्दर्य का आकर्षण अधिक प्रतिबिम्बित है किन्तु इसके साथ ही दाम्पत्य प्रेम की पवित्रता भी है।

चारों प्रशस्ति-परक शब्द-चित्र उस अर्थ में प्रशस्ति-परक नहीं जिस

अर्थ में रीतिकाल के कवियों ने अपने आश्रम-दाताओं की प्रशंसा की थी। वस्तुतः इनकी मूल चेतना सांस्कृतिक या राष्ट्रीय ही है।

" महाराजा सयाजीराव गायकवाड - एक चित्र में उनकी जन-सेवा तथा प्रेमानंद, मणिलाल, दयाराम, बाळाशंकर, रमेशचन्द्र दत्त तथा गज्जर जैसे नर-रत्नों का भी स्मरण किया गया है। कवि की मूल चेतना निम्न लिखित पंक्तियों से प्रमाणित है :-[1]

" विशाल वडोदराना देश राजवी श्रीमन्त गायकवाड सयाजीराव छे
पण वडोदराना हृदय राजवी तो भट्ट प्रेमानंद छे - - - -"

शेष " सौराष्ट्रनो साधु " तथा " गुजरातनो तपस्वी " सम-सामयिक युग-पुरुषों के व्यक्तित्व के निदर्शक हैं। प्रथम में अमृतलाल पढियार की जनसेवा तथा द्वितीय में महात्मा गान्धी के पचास वर्ष पूरे होने पर उनकी मानवसेवा, कर्मयोगी व्यक्तित्व तथा देश के जन-जीवन में उनके प्रभाव का भावपूर्ण वर्णन है। " महर्षि दयानन्द सरस्वती " से सम्बद्ध शब्द-चित्र में उनकी जीवनी और व्यक्तित्व को सूत्र रूप में प्रस्तुत किया गया है।

जीवनगत प्रसंगों से सम्बद्ध पांच शब्द-चित्र में से पितृ-तर्पण और गुरुदेव कवि की निजी श्रद्धा एवं संस्कारपूर्ण आस्था के परिचायक हैं। पितृ-तर्पण में अपने पिता कवीश्वर दलपतराम की अंतरंग प्रतिभा को प्रकाशित करते हुए कवि ने उनके प्रति अपने उद्दण्ड स्वभाव के कारण पश्चाताप किया है। पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :-

" बहु अवगण्या तात। अतल्काळां अनादर्या
ने अपमान्ने गारे आ हाथे देव अर्चिया

1 न्हानालाल, चित्र दर्शनो, पृ० १७

सीजव्या पनव्या पूरा, कुमळुं दिल कापियुं ;
ने तमारा दिनो छेल्ला फेर कीधा : सहु गयुं । "[1]

इनमें पुरानी स्मृति के भाव-पूर्ण चित्र हैं । इसी प्रकार " गुरुदेव " शीर्षक कविता उनके गुरुदेव काशीराम सेवकराम दवे के प्रति श्रद्धांजलि के रूप में है । " कुल्योगिनी " शीर्षक रचना अपनी पत्नी माणेक बहन के व्यक्तित्व के प्रति सम्मानार्थ लिखी गयी है । " श्रावणी अमास " तथा " ब्रह्म दीक्षा " में मृत्यु की विभीषिका का विस्तार से वर्णन है और अपने भ्राता के निधन पर शोकोद्गार के रूप में हैं अतः निष्कर्ष रूप में कहा जाय तो इन पांचों शब्द-चित्रों में कवि की निजी भावुकता की अभिव्यक्ति हुई है जो कि उनके गीतों को मार्मिक बनाने में पूर्ण सफल भी कही जा सकती है ।

प्रादेशिक वैशिष्ट्य एवं गौरव को लेकर लिखे गये पांचों रेखा चित्रों का क्षेत्र प्रधानतया गुजरात ही है किन्तु ये भावना के विविध पक्षों को जगाते हैं । " गुजरात " ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विषय वस्तु को लेकर लिखा गया है जिसके साथ ही उसके प्राकृतिक सौन्दर्य और गुर्जर-नारी की वेश-भूषा शारीरिक सौन्दर्य यहां के उद्योग-धंधों आदि का वर्णन है । किन्तु इसमें कवि की राष्ट्रीय चेतना ही मुखर है क्योंकि वह इस " गुर्जरी " बाला को हिन्द माता की प्यारी बेटी ही कहता है । " कठियाणीनुं गीत " में वीर और शृंगार का कलात्मक वर्णन है । " चारन-बालिका " का गीत चोरवाड के रम्य प्रदेश के प्राकृतिक और सांस्कृतिक चित्रों को संजोये हुए हैं । " गुर्जरी कुंजो " विन्ध्य पर्वत, नर्मदा नदी, कबीर वड आदि की शोभा, गोमती तालाब, डाकोर के मंदिर, गुजरात की वीरांगनाओं, साहित्यिक कवियों, गरनेश्वर तथा अंबा माता का मंदिर आदि के छोटे-बड़े चित्रों को प्रस्तुत करनेवाला गीत है । " गुजरातणनां वाण "

1 पितृ तर्पण, चित्रदर्शनो, पृ०

गुजरात की नारी की शोभा तथा उसके स्वभाव वैशिष्ट्य को प्रस्तुत करता है । इस प्रकार ये समस्त शब्द-चित्र सांस्कृतिक पक्ष को उजागर करनेवाले कहे जा सकते हैं ।

शेष " राजवीर " और " ताजमहल " शीर्षक शब्द-चित्र ऐतिहासिक है । इनमें कवि का वैचारिक व्यक्तित्त्व भी प्रकाश में आता है । " राजवीर " में वीर के ओजस्वी व्यक्तित्व, पौरुष और तेजस्वी शरीर का आलेखन है । " ताजमहल " में भी कवि विचारक अधिक हो गया है । इसमें आरंभ में जीवन दर्शन है । तदनंतर दाम्पत्य-भावना की ऊर्मियां जगाई गयी हैं और उसे शाश्वत प्रेम के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

इन सभी रेखा-चित्रों के उपरि निर्दिष्ट संक्षिप्त विवरण से इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि प्रस्तुत कृति में कवि का भाव-पक्ष व्यापक है । उसकी सुसंस्कृत और युगीन चेतना को लेकर प्रस्तुत हुआ है । इनकी शैली प्रभावोत्पादक है ।

प्रेम भक्ति भजनावलि : (१९२४)

इस काव्य संकलन का प्रथम प्रकाशन सन् १९२४ में हुआ था और द्वितीय संस्करण सन् १९३१ में निकला । इसमें कुल १०२ भजन के गीतों का संकलन है । जैसा कि जीवनी से सम्बन्धित पूर्ववर्ती विवेचन से प्रकट है कि कवि न्हानालाल पर वैष्णव भक्ति के गहरे संस्कार थे । उनका न्हाना न्हाना रास का प्रथम भाग प्रकाशित हो चुका था । प्रस्तुत " प्रेमभक्ति भजनावलि " उनमें से संकलित भक्तिपरक भजनों का संग्रह मात्र है । द्वितीय अध्याय में लक्ष्य किया जा चुका है कि वे स्वामीनारायण संप्रदाय में दीक्षित थे, किन्तु सभी धर्मों के प्रति भी उनमें आदर की भावना थी भजन के विषय में कवि की यह मान्यता थी कि " आत्मानां मुख्यानां, आ जन्म ने पर जन्म उभय अपूण्ये अपवासी जशे । भजन मुख्यो संसारी

आ जीवनमां ये आत्ममूल्यो ने परजीवनमां ये आत्ममूल्यो रहे छे "।[1]

सम्भवतः इसी रुचि और मान्यता के कारण यह संकलन अलग से प्रकाशित हुआ है ।

(४) न्हाना न्हाना रास भाग १-२-३

कवि की रास और भजनों से रुचि होने के कारण उसने उनकी रचना की । ये तीनों भाग क्रमशः अलग अलग समयों में प्रकाशित हुए । प्रथम भाग का प्रकाशन १९१० में, द्वितीय का १९२८ में तथा तृतीय १९३७ में प्रकाशन हुआ ।

अलग अलग पुस्तकों में लिखे गये रास को इकट्ठे करके प्रथम भाग का प्रकाशन हुआ । इसमें कुंडलियां और छप्पय जैसे छन्द और अनेक प्रकार की लोकप्रिय गीतों का संकलन है । साखियों के लिये सिर्फ दोहे ही नहीं लेकिन दोहा, सोरठी, वसंत तिलका संड हरिगीत आदि छंदों की भी रचना की है । इसमें भक्ति-परक नीतिपरकता, उपदेशात्मकता, मानवतामूलक, प्रेम और सौन्दर्य मूलक आदि विविधताओं से पूर्ण यह संकलन है ।

इस दूसरे भाग का प्रथम प्रकाशन सन् १९२८ में हुआ विविध विषयों से संबंधित इसमें ५९ रास हैं । ये रास भी अनेक विविधताओं को लिये हुए हैं जैसे, प्रेम, सौंदर्य, भक्ति मानवसेवा, राष्ट्रप्रेम आदि । तृतीय भाग का प्रकाशन सन् १९३७ में हुआ ।

कवि ने यह तीसरा भाग रास " जेठले काव्य फूलडुं " न्हानकडुं मघमघतु, सौन्दर्य सुगन्धातु ",[2] । इसमें विविधताओं से समन्वित इस रास संग्रह में

१ प्रेम भक्ति भजनावलि, प्रस्तावना, पृ० १०

२ न्हाना न्हाना रास भाग-३, प्रस्तावना, पृ० १०

एक नवीन तत्त्व का भी समावेश किया है। इसमें Ballad है जिसे गुजराती में " रासडा " कहते हैं इसका अर्थ है वर्णनात्मक या इतिहासात्मक लेकिन कुछ कम वार्तात्मक रास। ऐसे " रासडा" वीर रसपूर्ण रीति से गाये जाते थे। अर्थात् कवि ने इसमें वीररस पूर्ण रासडा भी लिखे हैं। इसमें विविध विषयों से संबंधित ७१ रास हैं।

(७) गीत मंजरी : (१९२८)

इस लघु काव्य ग्रंथ में छोटे-छोटे काव्यों का संकलन है, जिन्हें अलग अलग पुस्तकों से लेकर एक संकलन में स्थापित कर दिया गया है। इसका प्रकाशन सन् १९२८ में हुआ था, जिसकी तालिका इस प्रकार है :-

गीत क्रमांक | प्रथम पंक्ति | कौनसी पुस्तक में है

म्हारो मरनलो वीर — अर्धशताब्दीना अनुभव बोल, पृ० २२

भाव-सागरी लहरों के सौंदर्य का वर्णन और परब्रह्म की याद

१ गाओ ए महाकथा — राजर्षि भरत, पृ० २

मनुष्य मोहिनी

कवि ने इस नाटक में भरत से कहा है कि मनुष्य को प्रभावित करनेवाली महाकथा का यशोगान करो।

२ {अनुभव माला लखु के न / लखुं त्होये " शुं} — वेरलाक काव्यो भाग-१, पृ० ११२

यह व्यक्ति परक गीत है। जीवन के सुख दुःख हर्ष अश्रु किसी से कहे या नहीं इसकी द्विधा में कवि का मन व्यग्र है।

३ अमकुंजे तुंज आज प्रेमना पर्व — प्रेमकुंज, पृ० ११५

इस गीत में प्रेम का उत्सव मनाने का आमंत्रण है और ऋतु भी वसंत ऋतु है।

४ अमारे आंगणे तो एकदा केटलाक काव्यो भा० १, पृ० १५
कोयल हती ।
इस गीत में कोयल की मधुर ध्वनि और वसंतऋतु के वर्णन के माध्यम से प्रियतम को, प्रियतमा के आनेका आमंत्रण देती है ।

५ अमे अखंड यौवननी मूर्तिओ जया जयन्त, पृ० १६७

इस गीत में युवावस्था का भावपूर्ण वर्णन है ।

६ अहो आथमे आरुंपपापक प्रेम कुंज, पृ० ८८
इस गीत में प्रभु की दिव्यता और ब्रह्मांड की सर्वोपरिता का निदर्शन है ।

७ अहो जगत मायामां तप्या प्रेम कुंज, पृ० ५२
तपस्वीओ
संसार की माया का प्रभाव बतलाया है । मानव को संकेत किया है कि प्रेम की कुंज में पधारे और दिव्यता प्राप्त करें ।

८ अहो जोगी तणा जयकार जया जयन्ती, पृ० १७७
इसमें काम, क्रोध, लाभ, मोह को जीतने का संकेत है और बतलाया है कि विश्व जीत्यो जेणे काम जीत्यो, ब्रह्म जीत्यो जेणे, आतम जीत्यो ---[1]

९ अहो दुरना दरवेश हो, योगीन्द्र जया जयन्त, पृ० १८१
इस गीत में मानवसेवा के प्रति संकेत है, जिसे प्रभु-सेवा कहा गया है ।

१० अहो धन्य धन्य हो ब्रह्मांड कहे जया जयन्त, पृ० ५५
छे के ब्रह्म छे
भाव : परब्रह्म की महानता ब्रह्मांड ही सूचित करता है ।

१ न्हानालाल, गीत मंजरी, पृ० ३२

११ अहो प्रेम ज्योति परम ज्योति प्रेम कुंज, पृ० ४६
इस गीत में प्रभु के दिव्य प्रभाव का वर्णन है ।

१२ अहो प्रेमना परिमले प्रकाशतुं प्रेम कुंज, पृ० १०४
चंपानुं फूल
इस गीत में फूल की सुवास को प्रभु की सुवास के रूप में प्रस्तुत किया गया है । इस में " वदन कटोरी " और हृदय कटोरी के माध्यम से प्रेम का भी मूल्यांकन है ।

१३ आवजो आवजो यमुना घाट केटलांक काव्यो, भाग-२
त्यां मळीशु
इस गीत में ग्वालन, कृष्ण से यमुना के घाट मिलन के लिये कहती है । प्रियतमा का प्रेमपूर्ण आमंत्रण है गीत में विनय और प्रेम की तड़पन है ।

१४ आवो अमारे आंगणे केटलांक काव्यो भाग-१, पृ० २
इस गीत में भक्ति की तीव्रता में भक्त भगवान को अपने मन मंदिर में पधारने का आमंत्रण देता है ।

१५ आवो सन्तन सहुं प्रेम कुंज, पृ० २२
इस गीत में कवि सन्तों को अपने घर आने का आमंत्रण देता है और भावपूर्ण वाणी से विनति भी की है ।

१६ ऊगे छे प्रभात आज धीमे धीमे जया जयन्त, पृ० १२०
इस गीत में प्रातःकाल का चित्रात्मक वर्णन है ।

१७ ऊंचा आकाश - म्हारी व्हेनडी जया जयंत, पृ० १०१
इस गीत में तारों भरी रात्रि के सौंदर्य का वर्णन हैं ।

१८ एक ज्वाला जले तुज नयनमां जया जयन्त, पृ० १२८
भाव – परब्रह्म को रस ज्योति के संबोधन से पुकारकर कवि अपने आपको उस प्रकाश से भरना चाहता है ।

१९ गाय शा गुण नाद तारा – प्रेम कुंज, पृ० १२८
इस गीत में भी परब्रह्म की महत्ता का यशोगान किया है ।

२० घन गगन – व्हकी करे घोर शोर – जया जयन्त, पृ० १६४
इस गीत में वर्षाऋतु का वर्णन, मेघ की गर्जना, मोरों की आवाज आदि का वर्णन है ।

२१ चालो चालो सलूणी रसकुंजमां – जया जयन्त, पृ० ५८
इस गीत में एक सखि दूसरी सखि से रसकुंज में जाने के लिये कहती है और वहां के प्राकृतिक सौंदर्य का भी वर्णन है ।

२२ चालो वतननी कुंज निहाळो सखि – प्रेम कुंज, पृ० ७०
इस गीत में मातृभूमि देखने की तीव्र इच्छा और उसके लिये प्रेम प्यासी आंखों का वर्णन है । बचपन की स्मृति और युवावस्था की प्रेमलीला वे सब याद आते हैं ।

२३ जगत झूले रसभरोल – प्रेमकुंज, पृ० १३२
इस गीत में यह बतलाया है कि यह जगत प्रेम के झूले झूलता है ।

२४ जगतनी भूलभूलामणीमां – राजर्षि भरत, पृ० ८२
इस गीत में यह बतलाया है कि यह जगत भूलभुलैया है । इस माया की भूलभुलैया में है मनुष्य तू रास्ता मत भूलना ।

२५ जयतु अपि जयतु राजर्षि भरत, पृ० ८५
जय बोध त्हारा
इस गीत में वीरता का बाहरी दिखाव कैसा हो यह बतलाया है । हाथ

बलपूर्ण, नेत्र तेजस्वी आदि ।

२६ जय त्रिभुवनेश्वरी - प्रेम कुंज, पृ० १२
इस गीत में विधात्री की भूरि भूरि प्रशंसा कर उसका मुल्यांकन किया है ।

२७ जयना ज्योति जगत वधावशे - राजर्षि भरत
नान्दी के अंत में इस गीत में दिव्य मानवों की दिव्यता का यशोगान किया है ।

२८ जय जय कुमार आवो - नया जमन्त, पृ० १७
इस गीत में कुमारों और कुमारिकाओं को कवि इकत्रित करते है क्योंकि मानवसेवा का दैवी सन्देश घर घर पहुंचना है ।

२९ जरा वाजाने बळती बचावो, सजन - इन्दुकुमार अंक, १, पृ० २
इस गीत में कान्ति कुमारी नायिका के पिता उसे उसकी रुचि के विरुद्ध विवाह कर देते है यह चिल्लाती है कि " मेरी रक्षा करो " ।

३० जरी तो शान्त लज्जा धार - कैटलाक काव्यो भाग-२, पृ० १४
इस गीत में नायिका उद्दाम वासना की तीव्रता से निर्लज्ज बनने का प्रयास करती है उसे कवि सलज्ज रहने की सीख देता है ।

३१ जोगीडा - वसमी आ वननी वाट - नया जमन्त, पृ० १७८
इस गीत में यह बतलाया है कि यह जंगल का रास्ता बड़ा सूना और दूभर है । दिन अस्त होता है लेकिन मन के दुःख समाप्त नहीं होते ।

३२ झीलो प्यारे - झीलो जल झीलार्यु - कैटलाक काव्यो भाग-१, पृ० ८२
इस गीत में कवि मानव बाल का स्वागत करने के लिये सहानुभूति व्यक्त करता है ।

२३ तरछोडो शुं हाथ - विश्व गीता, पृ० १६५
इस गीत में प्रिय प्रियतमा का हाथ छोड जाना चाहता है उसके बारे में प्रियतमा कहती है कि तुम मेरा हाथ छोडकर जा सकते हो लेकिन तुम मेरे हृदय से नहीं जा सकते, तुम्हारा और मेरा साथ जीवनभर का है।

२४ दिलना पींजरमां पुराणी प्रेमनी पंखिणी - राजर्षि भरत, पृ० ६६
इस गीत में प्रिय ने अपनी भावनाओं से अपनी प्रियतमा को दिल के पींजर में कैद की है, भावपूर्ण गीत है।

२५ देव देवमांथी सन्तोषजो - राजर्षि भरत, पृ० ५२
इस गीत में मन की तल्लीनता से प्रभु भक्ति का सूचन किया है यदि तुम सच्चे दिल से प्रभु को याद करोगे तो प्रभु भी तुम को याद रखेगा।

२६ धन्य हो धन्य ज पुण्य प्रदेश - चित्र दर्शनो, पृ० २
इस गीत में गुर्जर देश और उसकी ऐतिहासिक विशेषताओं का वर्णन किया है।

२७ मनेरा ए हृदयना भाव, व्हाली - केटलांक काव्यो, भाग-१, पृ० ४५
इस गीत में कवि ने अपनी पत्नी से प्रेमपूर्ण सूचन किया है कि स्नेह और माधुर्य से पूर्ण गृहस्थाश्रम की यात्रा करके प्रभु के देश में जायेंगे।

२८ नयणां म्हारां नीतरे - केटलांक काव्यो भाग-२, पृ० ४
कवि के अंतर में सनातन ज्योत के दर्शन की तीव्र भावना जागृत हुई है। दर्शन के अभाव में कवि की वेदना मालूम होती है।

२९ नेणलांना किरण केरी कुंचीओ हैयां उघाडजो - विश्व गीता, पृ० ६९
इस गीत में कवि प्रभु की प्रार्थना करता है कि हे देव मेरा अज्ञान दूर करके मुझे ज्ञान का प्रकाश देना, " हैयां उघाडजो "।

४० नेणले पधरावी चन्द्र । पूजुं पुजावुं - विश्वगीता, पृ० १३२
इस गीत में प्रियतमा अपने प्रिय को आंखों में बसाकर पूजना चाहती है और उसका रसिकराज के नाम से स्वागत करती है ।

४१ पधारो, पंखीडा परदेशीवासी हो - केटलाक काव्यो भाग-१, पृ० ३१
इस गीत में कवि पच्छियों का स्वागत करते हुए कहता है कि मेरी चांदनी में आकर मेरी प्रियतमा का संदेश सुनाओ ।

४२ परम प्रेम परब्रह्म - नया जयंत, पृ० १३
इस गीत में कवि ने पवित्र प्रेम की भावना को परब्रह्म सदृश मानी है कवि प्रेम और सौंदर्य के कवि थे ।

४३ परम शब्द ए सुणो - नया जयंत, पृ० १७५
आत्मा का शब्द परम दिव्यता का शब्द है और उसका यशोगान इस गीत में किया है ।

४४ पियु प्रेमनुं प्रभात - नया जयन्त, पृ० १२५
इस गीत में प्रियतमा ने अपने प्रिय को प्रेम का प्रभात कहकर जीवनयात्रा वहीं से प्रारंभ होती है यह बतलाया है ।

४५ पुरना परदेशी - इन्दुकुमार अंक-२, पृ० १२७
इस गीत में कवि परम पिता परमात्मा का आत्मा के तीर्थ में स्वागत करना चाहता है ।

४६ पेला आभफरनले अनंग - राजर्षि भरत, पृ० ९५
देव मन्दीर में मृदंग बजता है, वह उस परब्रह्म के प्रति संकेत करता है यह इस गीत में बतलाया है ।

४७ प्रभो तुज द्वारमां ऊभी जमाव्यो म्हें अहालेक - प्रेम कुंज, पृ० ७२
इस गीत में कवि ने बडी दीनवाणी से प्रभु प्रार्थना की है और मांगा है कि

फलौली भक्तिभाव से भर दे ।

४८ प्रीछ जो ए प्रेमने, हे पौरव कुल मौर – राजर्षि भरत, पृ० १०७
" हे श्रेष्ठ पौरव कुल के राजा भरत तुम सच्चे प्रेम का मूल्यांकन करना " इस प्रकार भरत की प्रियतमा वसुंधरा उससे कहती है ।

४९ प्रेमनो पदारथ पारख्यो, रे परखंदा सन्तो, प्रेम कुंज, पृ० १०
इस गीत में कवि ने प्रेम पदार्थ को आत्मा की दिव्यता के साथ पहचानने के लिये कहा है ।

५० प्रेमानंद ज्योत जागी आज – प्रेम मन्दिरे – प्रेम कुंज, पृ० ११६
इस गीत में कवि ने प्रेम की ज्योत को प्रेमानंद की ज्योत के नाम से विभूषित की है और वह शुभ अमृत और दिव्य है यह बतलाया है ।

५१ फूल वीणी वीणी गुंथ्यो म्हें तो हार रे – इन्दुकुमार अंक २, पृ० ५५
इस गीत में कवि ने फूल के माध्यम से माधुर्य और सौरभयुक्त प्रेम का वर्णन किया है ।

५२ बतावने कोई प्रेमनी ए कुंज केरी केडी – प्रेम कुंज, पृ० २५
इस गीत में प्रेम का सीधा और सरल रास्ता कहाँ है वह कवि जानना चाहता है । इसमें कवि की प्रतीक्षा दिखती है ।

५३ बाला ! ऊगे ऊगे त्यहां वेळी आथम रे लोल – इन्दुकुमार अंक-१, पृ० १०५
सूर्योदय और सूर्यास्त और बिजली की चमक के माध्यम से कवि ने जगत के उत्थान और पतन का क्रम बतलाया है ।

५४ बोले बोले छे गिरिओमां मोर – जया जयन्त, पृ० ७०
इस गीत में मोर और मोरनी के व्याज से कवि ने पुरुष और स्त्री के पारस्परिक जीवन का मूल्यांकन किया है ।

५५ ब्रह्मांड ब्रह्मे पाथर्यु - इन्दुकुमार अंक-१, पृ० ७५
इस गीत में साधु संतों की महिमा बखानी है और उनका जीवन एकाकी लेकिन दिव्य है यह बतलाया है ।

५६ भवसागरमां डोले हो मानव नाव - जया जयन्त, पृ० १४२
इस गीत में छोटा रूपक बांधा है । यह संसार समुद्र है और मानव नाव है । नाव को लहरों से संघर्ष करना पडता है । मनुष्य को परिस्थिति से लडना पडता है ।

५७ मनना हरनार मनोहर प - राजर्षि भरत, पृ० ६०
राजर्षि भरत की प्रियतमा वसुंधरा यह कहती है कि मैं मेरे मन का हरण करनेवाले को कहां ढूंढूं और कैसे प्राप्त करुं । यह प्रेम की तीव्रता का गीत है और भावपरक है ।

५८ मैना पोपटनी ने विनवे रे - इन्दुकुमार अंक-२, पृ० १५
इस गीत में मैना और पोपट के माध्यम से पुरुष और स्त्री के सामंजस्य के प्रति कवि का संकेत है ।

५९ म्हारी मटुक हेल छलकाय रे - इन्दुकुमार अंक-२, पृ० ४०
सिर पर रखा हुआ घडा छलकता है और उस नारी का सौंदर्य जैसे शरीर से टपक रहा है इसका सांकेतिकभाषा में वर्णन है ।

६० म्हारो हींचको रे अमरवेलडीनी मांहृय - जया जयन्त, पृ० ४५
इस गीत में जया यह कहती है कि मेरा झूला अमरवेल की कुंज के बीच में है । वह प्राकृतिक सौंदर्य की तरह मौलिक है ।

६१ यौवन बोलावे आवार - राजर्षि भरत, पृ० ३२
इस गीत में कवि ने युवावस्था का मूल्यांकन किया है । यौवन बडी तीव्रता से किसी को बुलाता है यह बतलाया है ।

६२ रम्य लहरियो हृदयनी हासे - केटलाक काव्यो - भाग-१, पृ० १५
इस गीत में दो प्रकार के भाव बतलाये हैं । प्रियतमा का कुतुहल मधुर आदर और दीनता का भाव

६३ लोक लोकनी बोली बोलो - जया जयन्त, पृ० १५८
इस गीत में परमात्मा का यशोगान किया है, और मानव का आयुष्य सौ साल का माना है ।

६४ वनवननां अन्धारा वामशे - जया जयन्त, पृ० १३१
इस गीत में कवि ने यह बतलाया है कि परब्रह्म की दिव्य प्रभा से हृदयरूपी वन का घना अंधकार निश्चित दूर होगा । इसमें प्रीति और प्रतीति का भाव है ।

६५ विराटनो हिंडोळो फाकम फोर - विश्वगीता, पृ० ५
इस गीत में कवि ने परब्रह्म की महान सत्ता की ओर निर्देश किया है आकाश रूपी बड़ी बल्ली से यह संसार रूपी झूला बड़े झोंके लेकर झूल रहा है । आदर्श रूपक है ।

६६ वेणु लइये ने दइये - जया जयन्त, पृ० १०४ .
इस गीत में कृष्ण और राधा के व्याज से पुरुष और स्त्री के अद्वैत का भाव व्यक्त किया है । यह हृदय और प्रेम की आंखमिचौनी है ।

६७ शुभना शुकने हो संचरो, महाराज, - राजर्षि भरत, पृ० ११
इस गीत में शुभ शकुन, वीरता और शौर्य का मूल्यांकन किया है ।

६८ सखि ! नववसन्त सुर मधु मधुरा धीरा लावशे !
वसन्तोत्सव, पृ० ४५
इस गीत में वसन्त का प्रादुर्भाव बताते हुए नायिका के मन में उद्दीपन का

भाव प्रेरित करनेवाली ऋतु बतलाई है ।

६९ सखीजन फूल फूलना ए बाण - राजर्षि भरत, पृ० ५७
इस गीत में एक सखी अन्य सखियों से यह कहती है कि हाव, भाव, और कटाक्ष की पैनी दृष्टि से मेरा मन प्रभावित हो जाता है । और मैं अपनापन खो बैठती हूं ।

७० सजन । म्हारे नयनन नाचे मोर - विश्व गीता, पृ० ४२
इस गीत में नयनों की चंचलता मोर के नयनों की औतिविधि के समान बतलाई है ।

७१ सहियर जीवनो रे सलूणी जीवन वनमां स्वप्नां - राजर्षि भरत, पृ० २७
इस गीत में एक सखिने दूसरी से जीवनरूपी वन में अनेक स्वप्न आते हैं उसका स्वीकार करने के लिये कहा है । जीवन में विचारों की विविधता होती है ।

७२ संकोरी आम केरी फालो सुन्दरी उतरे संसारमां - राजर्षि भरत, पृ० १५७
इस गीत में कवि ने स्त्री के नैसर्गिक सौन्दर्य का वर्णन किया है ।

७३ सागर सखे । पुन जनमां एवुं कंई तो था - केटलाक काव्यो, भा० १, पृ० ५२
इस गीत में कवि ने सागर का मानवीकरण किया है और उसकी तुलना मानव जीवन के साथ और लहरों की तुलना विचारों के साथ की है ।

७४ स्मरण मा सतावो हुं व्हावरी - राजर्षि भरत, पृ० ४२
इस गीत में नायिका की वियोग की तीव्रता बतलाई है उसे संयोग की स्मृतियां बहुत सताती है वह स्मृतियों को सताने से रोकती है ।

७५ हुं तो जोगण बनी छुं मारा व्हालमनी - जया जयन्त, पृ० १२१
इस गीत में कवि ने नायिका अपने प्रेमी नायक की जोगण बनी है यह बतलाया है, नायिका की आत्म समर्पण की भावना व्यक्त की गई है ।

७७ हो जया " वीती वित्तनी कीधाईओ – जया जयन्त, पृ० १४८
इस गीत में नायक जयन्त नायिका जया से यह कहता है कि मेरा सब बरबाद हो गया। मेरे पास कुछ नहीं बचा है।

७८ हो – ओ। दुःखनो दिलासो एक योगीनो अंचलो – इन्दुकुमार अंक–२, पृ० १२६
इस गीत में कवि ने यह बतलाया है कि माया मोह के आकर्षणों में दुखः है, लेकिन योगी की अवस्था में ही पूर्ण शांति है।

७९ आपो ए आशीर्वाद – राजर्षि भरत, पृ० १९९
कवि ने भारत भूमि के उत्कर्ष और विकास के लिये सजन और सजनी से प्रार्थना की है।

इस संकलन में गीतों का पृथक्करण इस प्रकार है।

१– नियति परक – प्रस्तावना गीत क्रमांक – ६–१०–११–१२–१८–१९–२३–२६–२५–
२८–२९–४२–४५–४६–५२–५५–६९–७० : (१९)

२– मानवता परक – क्रमांक – १–५–१५–२७–२८–२९–३२–५२ ५३–५५ : (९)

३– प्रेम परक – क्रमांक – २–५–१३–३३–३४–४०–४१–४२–४४–५१–५३–५४–५८–५९–
६०–६३–६६–६८–७२–७५–७६–७७ : (२२)

४– आचरण परक – क्रमांक – ८–३०–४३–६४–७१–७४–७८ : (७)

५– प्राकृतिक सौंदर्य परक – क्रमांक – ४–१६–१७–२०–२१–७२ : (६)

६– राष्ट्रीय भावना – क्रमांक – २३–३६–७९ : (३)

७– वीरता परक – क्रमांक – २५–६७ : (२)

८– संसार (माया) परक – क्रमांक – ७–२४–५७ : (३)

९– वैयक्तिक – क्रमांक – २–३१–३७–६१ : (४)

१०– कुटकल – ५ गीत – कुल – ८० गीत है।

गीतों के संक्षिप्त विवरण द्वारा हम निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि भक्ति प्रधान गीतों की संख्या सब से अधिक है, उसके पश्चात् - रहस्यात्मक प्रेम के भी पर्याप्त गीत है । वैसे पूरा संकलन समय समय पर लिखे गये गीतों का संग्रह ही जान पडता है । अतः उसमें विषय-वैविध्य का होना स्वाभाविक ही है ।

(८) दाम्पत्य स्तोत्रो - (१९२१)

इस काव्य संकलन में दाम्पत्य जीवन से संबंधित कुल ४० गीतों का संकलन है पुस्तकाकार इसका प्रकाशन सन् १९२१ में हुआ । वैसे अलग अलग गीत अलग अलग समय पर लिखे गये है । कवि का दाम्पत्य जीवन अनेक प्रकार से पूर्ण सुखमय था । इसी काव्य ग्रन्थ में कवि ने बतलाया है कि

" पतिनी अविरत प्रेरणा पत्नी छे
ने पत्नीनी अखंड ने सतत प्रेरणा पति छे "[1]

कवि के दाम्पत्य जीवन के अनुभव के ये गीत हैं, दाम्पत्य (शृंगार) जिसका प्रधान रस हो ऐसे ही काव्यों का संकलन इसमें किया है । इसमें कवि ने पत्नी का गौरव, माता का गौरव, आदि बताकर नारी के प्रेम और माधुर्य का पूर्ण स्वरूप से मूल्यांकन किया है । कवि ने दाम्पत्य रस ही जीवन का मुख्य रस माना है और इसमें कवि ने अनेक प्रकार से नारी का गौरव व्यक्त किया है जैसे- कवि ने दो उदाहरण दिये हैं कि दाम्पत्य के विनाश में राष्ट्र का विनाश हुआ था : (१) दाम्पत्य विनाश में लंका नगरी का विनाश हुआ, (२) ट्रॉय Troy नगर का विनाश हुआ ।

पति-पत्नी की पूर्ण एकता से जीवन रसमय और पूर्ण बनता है कवि ने कहा है कि : " घर अमारुं, कुल अमारु, सन्तानो अमारा, म्हारा नहि, अमारां पति पत्नीनुं सहुं मारु मटी अमारुं थाय अस्मदीयम् बने एज दाम्पत्य रसनुं परम रहस्य - - - "[2]

1 न्हानालाल - दाम्पत्य स्तोत्रो, प्रस्तावना, पृ० १२
2 वही, पृ० १४

इसी प्रकार की लग्न जीवन में संबंधित प्रेम और माधुर्य की भावनाओं का पूरा परिपाक इन ४० गीतों के संकलन में प्राप्त होता है । गीतों का प्रकाशन काल निम्नांकित है :-

अर्पण – १९२१, प्रस्तावना – १९२१, लग्नगीत – १९०३, प्रेम सरोवर – १८९६, प्राणेश्वरी – १९०२, भरी सरळता – १९०१, ऊगे छे प्रभात – १९१२, वेणु लश्ये ने दक्ष्ये – १९१३, कुल योगीनी – १९०९, प्रभात – १९०१, लग्ननुं सहचार – १९०४, बहेननुं गीत – १९००, सौभाग्यवती – १९०३, प्रेमनगरना राजवी – १९२३, कंथ कोडामणी – १९१७, म्हारो चन्द्रमा – १९२८, लग्नतिथि – १९०२, पत्रवांचन – १८९६, आपणी लग्नतिथि – १९०८, आयुष्यनुं पर्व – १९२४, पुनर्लग्न – १९०३, रमणीय मुंझवण – १८९७, पधरामणी – १८९९, सुन्दरीनुं पारणुं – १८९७, मातृदर्शन – १८९९, तादात्म्य – १८९९, सूनुं पारणियुं – १८९९, सागर सखे – १९०२, म्हारो कन्थ – १९११, अबोळा – १९०९, पूर्णिमा पाछी ऊगी – १९२२, व्हालपनी वांसळडी – १९११, शीयळ – १८९६, धीर समीर – १८९८, हालरडुं – १८९९, सारसनो शब्द – १९०७, पात – १९०३, ताजमहेल – १९१८, म्हांना पडछाया – १९२०, दाम्पत्यना बाळ – १९२०, संस्कृतिनुं पुष्प – १९२९ ।

(९) बाळ काव्यो – (१९२१)

इस काव्य संकलन में विद्वानों की विनति को मानकर कवि ने छोटे बच्चों के सीधे सरल और उपदेशात्मक और आनंदप्रद ७१ बाल काव्य लिखे हैं । यह काव्य संकलन सन् १९२१ में प्रकाशित हुआ ।

कवि का सुवर्ण महोत्सव बम्बई में मनाया गया तब एक सज्जन ने कवि से कहा –

" न्हानाभाई ! गुजरातनां बाळकोने विसारवानो आक्षेप तमारे माथे छे हवे ए दूर करो – – – – "[१]

---

१ बाल काव्यो, प्रस्तावना, पृ० ८

यह सुनकर कवि ने दृढ़ संकल्प किया कि छोटे बच्चों के लिये जरूर लिखूंगा। जिसके फलस्वरूप यह संकलन प्रकाशित हुआ। इसके अलग अलग गीत भिन्न भिन्न समय पर लिखे गये हैं। यथा –

सूरज – १९०४, तारा – १९०४, चोबवाई – १९०४, चांदलियो – १९०४, दूध – १९०४, बाळकोने शिखामण – १९०४, साच्ना सिपाई – १९०४, हतो – १९०२, पहेली पगलीओ – १९०४, पोपट – १९०४, ज्हेनां आवो – १९०३, चौटु – १९०४, खेडूत – १९०४, म्हारी मावडी – १९०४, कुहाडी– १९०४, मधमाख – १९०४, कोयल – १९०४, डांगरना खेतर – १९०४, पूरनो मोरलो – १९०५ – हालरु – १९०४, गोवालणी – १८९८, वसन्त ल्यो – १९०५, रामजन्मास – १९०४, श्रवण – १९०४, व्हेन्नो शणगार – १९०४, म्हारा पोपट– १९०८, लणणी – १९०४, नावनो कप्तान – १९११, मम्मर ने टोडले – १९२८, म्हारो हींचको – १९१२, गुणियल गुर्जर देश –१९१७, बोले छे मोर – १९०६, पंखीडां – १९०२, म्हारो भरणो – १९१९, विनति – १९०७, हो योगीन्द्र – १९१२, जोगीओना वाड – १९०१, मावडीनो माल – १८९९, गरनड बाळा – १९०४, भारतभूमि – १९२१, अने स्तोत्र – १९०५।

इस प्रकार इस संकलन में विभिन्न प्रकार के वर्णनात्मक उपदेशात्मक ४१ गीत हैं जो आज भी बच्चों को बहुत प्रिय है।

(१०) ओज अने अगर, – (१९२२)

कवि का यह एक लघु कथा काव्य है, जिसका सर्व प्रथम प्रकाशन सन् १९२२ में हुआ था। इसमें प्रेम का मधुर निरूपण किया गया है। प्रणय के साथ साथ इसमें ग्राम्य जीवन की अनेक परिस्थितियों का भी वर्णन मिलता है। कथा का

सारांश इस प्रकार है - अगर एक श्रीमंत कुल की धनिक कन्या थी और ओज गरीब घर का कुमार। इन दोनों के बीच शैशवावस्था से ही प्रीति थी। दोनों प्राकृतिक सौंदर्य के बीच में कई बार मिलते थे। कभी नदी के किनारे कभी कुंजों में, कभी विशाल मैदान पर, कभी ज्योत्स्ना में, कभी सायंकाल के समय आदि। वहां वे दोनों बड़े प्रेम से और हृदय की तीव्रता के साथ प्रेमालाप करते हैं, किन्तु उनके प्रेम की परिणिति विवाह में नहीं होती ; फलतः दोनों वियोग की वेदना से पीड़ित हो जाते हैं। इसे देख कर शिवमहाराज ओज के पास गये। और उसे सांत्वना दी इतना ही नहीं उसे जीवन के कल्याण की प्रेरणा भी दी। इसी वियोग व्यथा के कारण अगर का निधन हो गया और उसके पिता कल्याण घाट पर अगर के मृतदेह पर जो फूल रखे गये थे उसे इकट्ठे करके एक छोटी देहरी बनवायी और ओज उसी देहरी का पुजारी बनता है। पंक्तियां द्रष्टव्य हैं

" धन्य भाग्य आज सखपरमां
ओज अगरनी यात्राए आव्यो छे
आव ओज। मा बोलावे छे
कल्याणी ने आरे आव
तु साचो छे ओज।
यथा शक्तिमति, यथा साधन संपत्ति,
स्नेहीओ सौ निज निजना यमुना घाटे
निज निजना ताजमहल बांधे छे। "[1]

ऐसा प्रेम का दिव्य स्वरूप प्रतिपादन करके प्रेमी की स्मरणांजली की कवि सराहना करते हैं और उसे दिव्य और अनुपम कहा है।

इस कथा में ओज और अगर की प्रणय कथा के साथ शरद-मेघ की कौमार लग्न की रस कथा भी गुंफित है। मेघ प्रेमी के प्रतीक के रूप में और शरद

---

१ ओज अने अगर, पृ० १२६

प्रेमिका के प्रतीक के रूप में कवि ने बतलाये है । वार्तालाप के माध्यम से दोनों प्रेम की चर्चा करते हैं, कालांतर में मेघ भी विलीन हो जाता है और शरद भी । इस प्रतीक के माध्यम से यह बतलाया है कि प्रणय शाश्वत नहीं है :-

" आपणे कौमार लग्नना' लग्नतिथा'
परण्या'तां पण नथी परणेला' ;
स्मरण संप्रदायना' रसोपास को
मानुं वरदान छे मेघ,
वर्षभरमा' एकादी वेळा,
चन्द्री सूर्यने ललाटे बेसे छे
स्नेहनी जोगणी पम व्यवहारेक
स्नेह जोगीने समेये जई,
ने स्नेह ज्योत संकोरी आववी - - - "[1]

इस प्रकार यह एक दुखांत और मानवसेवा मूलक लघु प्रणय कथा के अंतरंग में काल्पनिक शरद और मेघ की भी कथा का गुंफन कर कवि ने प्रणय प्रेम की नश्वरता बतलाई है ।

(११) केटलांक काव्यो भाग-२ : (१९२९)

इस काव्य संकलन में चार पंखुडियाँ है । यह एक पुष्प की तरह सुवासित है । इसका प्रथम संस्करण सन् १९२९ में हुआ था । इसमें की अलग अलग पंखुडियाँ अलग अलग समय पर प्रकाशित हुई थीं । (१) जगतनी जोगणोने सन् १९०९, म्हारो मोर - १९०६-७, संस्कृतिनुं पुण्य - १९२९, म्हारो मोर और पारेवडां प्रो० त्रिभुवनदास गज्जर के यहाँ लिखे गये काव्य हैं । चारों काव्यों की

१ ओज अने अगर, पृ० १३१-१३२

अधिष्ठात्री स्त्री जन है उन्हीं की प्रधानता है। इसलिये इस काव्य संग्रह का अर्पण जगतनी जोगणाने ने इस प्रकार किया है।

(१) जगतनी जोगणाने :

यह एक अर्पण काव्य है। स्त्रीजन की महत्ता गौरव और माधुर्य प्रभाव को ध्यान में रखकर कवि ने अपनी पूज्य भावनाएं स्त्री जगत् के प्रति ~~व्यक्त~~ व्यक्त की है। इस गीत में पुरुष और प्रकृति (नारी) दोनों की यह महिमा बतलाई है। पंक्तियां द्रष्टव्य है :-

" पुरुष अने प्रकृतिनी वेलडी,
वेलडी शिवने उमाय,
जोगी जोगणनां ये जोडलां,
द्वैत रमे छे अद्वैत ज्यहां - - - "[१]

इस प्रकार इस अर्पण कविता में कवि ने नारी जगत के प्रति अपनी पूज्य भावनाएं व्यक्त की है।

(२) म्हारो मोर :

यह एक लघु कथा काव्य है। कथा सार:सागर के किनारे एक राजमहल था। उसमें महल के पूर्ण अनुरूप एक महारानी रहती थी। उसने बडे प्रेम से और माधुर्य भाव से एक मोर पाला था। एक दिन वह मोर आंगन में क्रीडा कर रहा था। वह अपने क्रिया कलाप में तल्लीन था। इतने में दुर्भाग्य से वहां एक कुत्ती आयी, वह भी पालतु थी और उसने उसे दबोच लिया। मोर मृतःप्राय हो उठा। इतने में रानी आगई और वह बडा करुण कल्पांत करते मोर को मृत्यु के सन्निकट देख कर वह चीख चीख कर रोने लगी। उसकी रोने की करुण और तीव्र पुकार सुनकर दूर गुफा के अंतराल में से एक जोगी बाहर आये। रानी के

१ न्हानालाल, केटलाक काव्यो, भाग-२, पृ० ४

पास गये और उसे इस प्रकार रोने का कारण पूछा । रानी ने जो करुण घटना बनी थी उसका यथार्थ वर्णन किया और भावा-विभोर होकर खूब रोने लगी । इतना ही नहीं वह योगी की शक्ति और सामर्थ्य से परिचित थी । उसने योगी से कहा । पंक्तियाँ द्रष्टव्य है -

" जिवाडो जिवाडो ओ योगी ।
म्हारा देव पंखेरा आ मोर ने
नही तो सूना सूना पडशे
म्हारां मनना रंग म्हेल - - - "[1]

अत्यंत दीन और करुण वाणी सुनकर योगी प्रभावित हुए लेकिन वे भावनावश न होकर बुद्धि और समझ से रानी को सीख दी । पंक्तियाँ द्रष्टव्य है -

" पीयुषनी प्याली पामुं छुं
टीपु टीपु पाउं छुं पाणीमां
पछी कटोरी छूटी जाय छे
हा । अखंडवाहीनी जीवनजळनी सेर ।
हजी लाधी नथी म्हने - - - "[2]

" बोले रड के द्वास,
विश्व आखुं मृत्युभुलामणी छे
सारी पृथ्वीने पाथारे
मृत्यु मुक्त दीठुं मानवीनुं को कुळ मन्दिर ?
जडेलां रत्नों खोवाशे जन्ममांथी - - - "[3]

ठठठठठठठठठठठठठठठठ

1 न्हानालाल, केटलांक काव्यो, भाग-३, पृ० १३
2 वही, पृ० २१
3 वही, पृ० २२

इस प्रकार उसे योगी ने रानी को जन्म और मरण का शाश्वत सत्य समझाया और एक से दूसरे का महत्त्व और मूल्यांकन भी है ।

सूर्योदय और सूर्यास्त, दिवा और रात्रि आदि परस्पर विरोधी बातों को बताकर कहा कि रानी यदि जन्म है तो मृत्यु निश्चित है ही , यदि सर्जन है तो विनाश भी है । मनुष्य जन्म का स्वागत करता है तो उसे मृत्यु का भी स्वागत करना चाहिए । पंक्तियां दृष्टव्य है :-

" मयाने संसारीओ संभारे छे
एटलुं मृत्युने भूलवा नथी
" छे " नी महेमानी " नथी" ना जेटली थाय,
तो शोक, रुदन आंसुना परिवार
नरलोकमां आज अडधेराक होय - - - "[1]

इसके अनंतर योगी ने अपनी दिव्य और प्रभावपूर्ण वाणी से रानी को जन्म और मृत्यु का महत्त्व, देह और वासना का महत्त्व तथा आत्मा और प्रेम का महत्त्व समझाकर परब्रह्म की सत्ता का पूर्ण रूप से भावनामय परिचय करवाया । जिससे रानी जो गंभीर शोक मुद्रा में थी और मोर की मृत्यु से बावरी-सी हो गई थी वह स्वस्थता प्राप्त कर सकी । उसने यही समझ लिया कि जब नियति ने जन्म का विधान बनाया तो उसके साथ साथ मृत्यु का भी विधान बनाया है । अंत में उपदेश दिया कि मोर की तरह अब मानवों की सेवा शुश्रूषा करना उसमें कवि ने तीन मुख्य बातें बतलाई हैं :-

(१) नियति की परम सत्ता के आगे मनुष्य निरुपाय है ।

(२) नियति के विधान का सद्भाव से मूल्यांकन करना चाहिये ।

(३) मानव सेवा का आदर्श नियति का ही आदेश है ।

---

१ न्हानालाल, केटलाक काव्यो, भाग-१, पृ० ३४

(१२) ब्रह्म जन्म :

यह एक मिनी अनुभव काव्य है । कवि का यज्ञोपवित संस्कार हो जाने के बाद उसके मन पर गायत्री मन्त्र का नया प्रभाव पडा और किस प्रकार वे कवि धर्म की प्रेरणा से प्रेरित हुए यह बतलाया है ।

इसको स्पष्ट करने के लिये कवि ने प्राकृतिक उपादानों का उपयोग किया है जैसे आकाश में घना अंधकार है । तमसाच्छन्न आकाश था । सूर्य भी नहीं चन्द्र भी नहीं, चंद्रिका भी नहीं, टिमटिमाते तारों का मंद प्रकाश दिखता था । रात्रि भी भयानक मध्यरात्रि थी । इसके अनन्तर रात्रि की समाप्ति और प्रातःकाल का प्रारंभ उषा का आविर्भाव प्रभाव । अदृष्ट रूप से ब्रह्मकुमारी सूर्य के जैसी प्रभावशालिनी गायत्री देवी का प्रभाव लक्षित हुआ । प्रातःकाल घनघोर तमिस्रा का नाश करता है उसी प्रकार ब्रह्म कुमारी गायत्री ने कवि की अज्ञानता और अरसिकता दूर कर सरस्वती की तीव्र प्रेरणा प्रदान की । संक्षेप में यह पारिवारिक जीवन के उत्सव-संस्कार से सम्बन्धित काव्य है जिसकी मूल चेतना सांस्कृतिक कही जा सकती है ।

(१३) पारेवडां :

इस लघु काव्य में कवि ने कबूतर और कबूतरी के माध्यम से मानव को प्रेम और स्नेह में रहने का संदेश दिया है ।

कबूतर और कबूतरी बडे प्रेम से साथ रहते थे । महादेव के मंदिर के पास एक छोटी-सी छत्री में वे रहते थे और दाने चुगते थे । दुर्भाग्य से ऐसा हुआ कि उस जगह अकाल पडा । लोग अपने अपने स्वार्थ में तल्लीन रहे और पंछीओं को दाना चुगने के लिये दूर दूर भटकना पडता । वे दोनों दिन भर भटकते रात को अपने घोंसले में आ जाते और एक-दूसरे को प्रेम से सहलाते थे । इस प्रकार दोनों पंछी दूर दूर भटक कर दाना चुगते पानी पीते और अपने घोंसले में लौट आते थे ।

एक दिन मैना और पोपट उनके आश्रम में यानी कि घोंसले में आये। दोनों ने उनका यथोचित सत्कार किया और बड़े प्रेम से कबूतर, कबूतरी, मैना और पोपट साथ में रहने लगे। इतना ही नहीं मैना और पोपट के बच्चे और कबूतर कबूतरी के बच्चे भी साथ में रहने लगे जैसे एक कुटुंब न हो। इस प्रकार कवि ने ये दो कुटुंबों की प्रेम कथा, स्नेहकथा का आलेखन करते हुए प्रेम का प्रभाव बतलाया है। निम्नलिखित पंक्तियां दृष्टव्य है :-

" स्नेहीओ मृत्युथी पर छे
अवनीमांना अमरो छे
चिताओ स्नेहने बाळती नथी - - - "[1]

(१४) संस्कृतिनुं पुष्प :

जैसा कि पूर्ववर्ती पृष्ठों में भी निर्दिष्ट किया जा चुका है, कवि न्हानालाल प्रतिवर्ष अपनी " लग्नतिथि " मनाते थे। पूर्वनिर्दिष्ट कतिपय रचनाओं की भांति प्रस्तुत काव्य का विषय भी उक्त प्रसंग से सम्बन्धित है। इस काव्य में कवि ने दाम्पत्य जीवन का महत्त्व अंकित किया है। कवि ने यह बतलाया है कि दाम्पत्य जीवन व्यष्टि के माध्यम से समष्टि की ओर गतिशील रहता है। उसमें आर्य नारी के संस्कारों का यशोगान किया है और अपनी परम मंगल भावना बतलाई है।

दाम्पत्य के रस गौरव के लिये कवि अद्वैताचार्य शंकराचार्य, और मंडनमिश्र की पत्नी भारती देवी की चर्चा और शंकराचार्य की जो हार हुई थी उसका उदाहरण देकर कवि दाम्पत्य की विजय और नारी गौरव का मूल्यांकन करता है।

दाम्पत्य की अधिष्ठात्री के रूप में नारी को " संस्कृति का पुष्प "

1 न्हानालाल, केटलांक काव्यो, पृ० ७२

कहर कर उसका भावपूर्ण सत्कार कवि करता है । नारी जीवन से संबंधित कवि की कोई भी कविता ले उसमें कवि का संस्कारी नारी के प्रति " पूजन " और " नमन " का भाव है । प्रियतमा के स्वरूप में उसे रसज्योति मान कर नमन किया है । और दाम्पत्य में सहयात्री मानकर " नमन " और " पूजन " दोनों भी व्यक्त किये हैं । [redacted] काका कालेलकर ने तो कवि को " नारी गौरवनो कवि " इस नाम से विभूषित भी किया है । कवि ने पुरुष और स्त्री दोनों की समान मैत्री की भावना बतलाई है । दासता की नहीं ।

श्री बाल चन्द्र परीख ने गुजराती में कहा है कि –

" ए विकास दर्शनना ने केन्द्र रूप छे ते आर्य नारीनो आदर्श संपूर्णपणे फलायमान थतो दीसे छे । " संस्कृतिनुं पुष्प " सरखा एमना समुन्नत दाम्पत्य स्तोत्रोमां ज्यारे आंतरिक जीवननी समरताथी छलकातो दाम्पत्यनो प्राण संस्कृतिनां अवतरण अने विस्तार करवे आवश्यक एवुं सर्जनात्मक प्रेरणा बळ प्रगटावे छे । आ दृष्टिए " संस्कृतिनुं पुष्प " न्हानालालनी दाम्पत्य भावनाना परिपूर्ण विकासने प्रतिबिंबित करता समर्थ प्रतिभावन्त खंड काव्य तरीके एमनी आदर्श कवितानी टोच समुं गणी शकाय । "[1]

(३५) महेरामणनां मोती : (सन् १९३५ ई०)

स्वास्थ्य लाभ के लिये विश्रान्ति के दिनों में लिखे गये २५ गीतों का यह संकलन सन् १९३५ ई० में प्रकाशित हुआ । इन दिनों वे जुहू समुद्र तट पर स्थित आरोग्य भवन में ठहरे थे । अतः अधिकांश कविताएं इस परिस्थिति की देन हैं । " सागर छोळ ", " जुहूना जलधि जळ आरे " दुनियाना दुरबीनो पांगळी रे, " म्हारे सागर ओळंभवो " " रंगभीना रमत्युं रमे रे ", " सागरना पडछन्दा ",

---

१ बालचन्द्र परीख, रसगन्धा, पृ० १२१

" सागरना हिलोळ ", " अनन्तने आरे ", " हरि हैयियां लिये ", दिलदेशनी महावाण " शीर्षक गीत सागर लहरों तथा उनके दूरवर्ती दृश्यों के भाव-पूर्ण चित्रों से परिपूर्ण हैं । " वेरण रातलडी ", " चन्दनी प्रभातनी रे ", " वसन्तना व्हेणाओ ", "एज आ चन्द्रमा ? " तथा " असीमनी सीमा " जैसे गीत अन्य प्राकृतिक दृश्यों और उनके रहस्यात्मक संकेतों को संजोये हुए हैं । " वीरा ! त्हारे कारणे रे ", " विधि पेलो माथ्यने घडे ", " अमे पालवाथी गुर्जरो ", " जोवननी मुलो ", " ऐ देश " जैसी रचनाएं उपदेश और विचार प्रधान कही जा सकती हैं । वैसे " सागरना पडछन्दा " में भी उपदेशात्मक का पुट है । शेष अलबेलो आज युद्धे चढे रे " " रणदेव " जैसी कृतियां युद्ध गीत हैं तथा " जोगन्दरी " और " नन्दनो दुलारो " शीर्षक गीत भक्ति और उपदेश प्रधान हैं । इस प्रकार छह गीतों को छोड, शेष प्रकृति-प्रेम और उसके रहस्यात्मक संकेतों का द्योतन करते हैं । अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि इन गीतों के माध्यम से कवि एक ओर नैसर्गिक छटा तो दूसरी ओर मानव-प्रकृति से सहज एवं रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करता है । भावुक अंतःकरण की आत्माभिव्यक्ति इनकी उल्लेखनीय विशेषता है ।

सोहागण – प्रकाशन तिथि – सन् १९४०

यह वैयक्तिक अनुभूति के परिणाम स्वरूप लिखे गये लगभग २१ गीतों का संकलन है । यह लक्ष्य किया जा चुका है कि वैशाख शुक्ल पंचमी को वे ठाठ-बाठ से अपनी " लग्न-तिथि " मनाते थे । प्रारंभ के तीन गीतों में पत्नी माणेक बहन के शैशवकाल के चित्र हैं । तदनन्तर तीन गीतों में दाम्पत्य जीवन में प्रविष्ट माणेक बहन के सौन्दर्य का वर्णन, सातवें गीत में पिता कवीश्वर दलपतराम की अंतिम अवस्था का चित्र है, जिसका शीर्षक " बाण-शय्या " दिया गया है । किन्तु उसमें भी माणेक बहन की सेवा-शुश्रूषा का पक्ष उभारा है । शेष गीतों में उनकी समाजसेवा, अतिथि सत्कार व्यक्ति की दिव्यता, साहस, मधुर व्यवहार, कर्तव्यपरायण गृहिणी का आचरण, वेश-विन्यास तथा कर्मवीरता आदि गुणों को प्रस्तुत किया गया है । इस प्रकार देखा जाय तो यह संकलन आदि से अन्त तक धर्मपत्नी के व्यक्तित्व को

केन्द्र में रख कर कवि की व्यक्तिगत भावनाओं को प्रकाशित करता है।

(१७) पानेतर : (१९४१)

यह एक पुरातन भावों पर आधारित काव्य है। इसका प्रकाशन सन् १९४१ में हुआ था। इसमें भारतीय संस्कृति पर आधारित लग्न जीवन का इतिहास गृह्य सूत्रों के आधार पर बतलाया गया है। इनमें बहुत पुरातन काल से लगभग आज के तीन-चार हजार बर्ष पूर्व पुरुष और स्त्री का पूर्ण रूप से मूल्यांकन कर दोनों को प्रेमपूर्वक मिलने की लग्न दिशा का महत्त्व बतलाया है। इस प्रकार का मानव जीवन अत्यंत मौलिक और अनिवार्य है। काम की मूल स्त्री और पुरुष में समान रूप से रहती ही हैं और दोनों के प्रेमपूर्वक मिलन से उसकी परिणिती आनंद में होती है। विज्ञान का उदाहरण देकर कवि ने यह बतलाया है कि Positive और Negative दोनों के मिलन से ही बिजली का प्रकाश उत्पन्न होता है उसी प्रकार से पुरुष और स्त्री दोनों के मिलन से ही सृष्टि सर्जन होता है। इसमें एक Positive है तो दूसरा Negative ; दोनों Positive मिलने से अथवा दोनों Negative मिलने से प्रकाश नहीं होता उसी प्रकार दो पुरुषों के संयोग से या दो स्त्रियों के समागम से सृष्टिसर्जन नहीं होता। अर्थात् सृष्टिसर्जन के लिए पुरुष और स्त्री का संयोग अनिवार्य है और यह मौलिक है। इसी सृष्टिसर्जन की भावभूमि को कवि ने " लग्न " बतलाया है। और तुलनात्मक दृष्टिकोण से यह सबूत किया है कि भारत की लग्न पद्धति आदर्श सारग्रही और दिव्य है। इसमें बतलाया है कि दोनों ही एक-दूसरे के पूरक बनकर संसारयात्रा फलदायी बनावे। दाम्पत्य भाव में मित्रभाव है, साख्य भाव है, दासभाव या दासी भाव नहीं।

कवि के अपने शब्दों में -

" आर्य संसारना संसारशास्त्र ने कविता गृह्यग्रन्थोमां छे आर्य महाप्रजानी कविता काव्योमां छे एथी अधिक आर्य संसारमां छे - - - "[1]

---

१ न्हानालाल कवि, पानेतर, प्रस्तावना, पृ० २८

हस्तमिलाप, लाजाहोम, मंगलफेरे और सप्तपदी हिन्दी लग्न के प्रधान अंग है। कवि ने बतलाया है कि " मनुष्य धन रंक भले बने। पण भावना रंक न बने। " परमाणु का गतिशील संकलन मानव है, इसलिए परमाणु से मानव महान है और इसलिये परमाणु लग्न से मानव लग्न श्रेष्ठ है।

" व्हाला। त्हमें। पुरुष अमे नारी।
आवो हरि। रास रमो व्हाला। "[1]

इन काव्य पंक्तियों में लग्न जीवन का मर्मसंदर्भ है। इसमें नर और नारी दो है। दोनों का भावपूर्ण मिलन अद्वैत है। स्त्री और पुरुष का संसार रास वह लग्न। कवि कहते हैं, " लग्न एटले द्वैताद्वैतनी रस रमणा। गृह्यसूत्र में कहा है, स्त्री ऋक् है तो पुरुष[2] साम है। इस प्रकार उस छोटे काव्य में लग्न जीवन का आदर्श और आदर्श लग्न जीवन का मूल्यांकन किया है। इसी से संबंधित इसमें इतने खंड हैं।

पारब्ध पर्वणी, ए स्हांज, दर्शन, हस्तमेळाप, लाजाहोम, मंगळफेरा, सप्तपदीइ सख्य, ध्रुवतार लो, जीवननी महाकविता, पानेतर।

कन्या के बिदा के समय उसके माता-पिता की तरफ से जो बहुमूल्य रेशमी वस्त्र दिया जाता है उसे पानेतर कहते हैं। इसका प्रभाव कवि ने इस प्रकार बतलाया है :-

" आमन्दनुं अंबर ओढवा पछी
महियेरमां साकरवेल माणवा,
प्रभा प्रभाकुं गुज मात गर्वनुं,
म्हें कहाडयुं पानेतर लग्नपर्वनुं, - - - "[3]

---

१ पानेतर, पृ० ११

२ वही

३ वही, पृ० ४४

इस प्रकार यह लग्न जीवन पर आधारित एक खण्ड काव्य है ।

(१८) हरिदर्शन : (१९४२)

कवि न्हानालाल लिखित यह खण्ड काव्य है । इसमें एक घटना विशेष का वर्णन है । प्रकाशन काल सन् १९४२ ।

सन् १९१२ के उत्तरार्द्ध में कवि अपने संघ के साथ द्वारका गये थे । उस समय वहां जामनगर से द्वारका जाने के लिए रेलगाडी नहीं थी । राजकोट से कविपत्नी माणेक बहन भी साथ में आईं । बडी कठिनाई से सागर के तूफानों से बचकर द्वारका मंदिर में पहुंचे । हरिदर्शन का समय समाप्त हो गया था । मंदिर के मुखिया ने कहा, " टेरो आ गयो " अब दर्शन नहीं होंगे । माणेकबहन उसकी बहुत विनति की लेकिन वह अपनी बात पर अडिग रहा । इतने में ही भक्त की दीन वाणी सुनकर और सच्चे हृदय की प्रतीक्षा जांचकर एक चमत्कार हुआ अपने आप टेरा गिर गया । और सब को हरिदर्शन प्राप्त हुए । इस चमत्कारिक घटना से प्रेरित होकर कवि ने इस खण्डकाव्य की रचना की । इस काव्य में कवि ने उक्त यात्रा का विस्तार से वर्णन किया है, जो " मुहूर्त " १७ तक विभाजित है । क्रम इस प्रकार है, वैष्णव दम्पति, प्रेमयां, पांगरी, अजोरागीयां, महतो, महीयाम, रैवनी गहनतामां, सागर मार्गे, मुक्तिपुरी, द्वारामती, गोमती स्नान, द्वारिकानी दीपमाळा, मधरात्नो मोरलो, प्रभाता चोघडियां, श्री हरीना स्मरस, संवत्सरनी पाळे, एक तारो, टेरो आयो, हरिदर्शन, मन्दीरना चोकमां, नयन अंघोज ।

पूरा काव्य भक्ति-परक कहा जा सकता है ।

(१९) वेणु विहार : (१९४२)

यह भी एक घटना प्रधान खंड काव्य है । यह एक घटना विशेष पर आधारित है - प्रकाशन सन् १९४२ ।

दिसंबर, सन् १९३५ को कविश्री अपने कक्ष में लिखने बैठे थे, उस समय तीव्र गति से ठंडे पवन का झौंका लगते सर्दी का अनुभव हुआ। काम न कर सके और बिस्तर पर लेट गये। पुनः शीत अनिल का आक्रमण हुआ और कवि रोगवश हुए। हृदय भी क्रम क्रम से शीत होने लगा ऐसा लगता था। शायद काल कहीं भूला तो नहीं था। वाघ की चरबी की मालिश भी की गई फिर भी कोई फर्क न हुआ। इस प्रकार यह लघु कथा दिनांक १०,११,१२ दिसम्बर की घटना है।

इन तीनों दिन कवि रोगवश थे। दूर पेडों की घटा में से स्फुट अस्फुट बंसरी की ध्वनि सुनाई दी। कवि कुछ निद्रावश थे। बंसरी की ध्वनि सुनकर आँखें खुल गईं। टिकटिकी लगाकर देखा तो एक छोटा बालक पूर्ण कृष्ण की वेशभूषा से भूषित बंसरी बजा रहा था। मोरमुकुट पीताम्बर सोहित करमें मुरली पर वैजयंतिमाल और भावपूर्ण रीति से बंसरी बजा रहा था। मध्यरात्रि समाप्त होने के बाद वह बालक मेरे पास आया, नाचा, कूदा, बंसरी बजाई, खूब हंसा, भावपूर्ण दृष्टि से मुझे निहारा और अदृश्य हो गया। कवि यह कहता है कि " किसीने उसे गोकुलमें देखा होगा। " किसी ने व्रज में लेकिन मैंने तो उसे मेरे आंगन में बंसरी बजाता देखा है। अखंड बंसरी की तान उसने छेडी और कवि ने सुनी ~~यही~~ यह काव्य " वेणु विहार " है।

यह काव्य इन १२ " मधुरंग " में विभाजित है :- वसन्तवाडी, अंधारगुप्ता, बंसी शब्द, वेणुविहारी घटापल्लवमां, प्रभुना पहेरा, महामहिमा, मंदी मंदी ने पांदडे, भुलभुलामणी, अखंड बंसरी, सौभाग्य कंकण, रसगोठडी, सागर नृत्य, वरदान, प्रभुर्ति, महन्तामा, भक्तिभावना से प्रेरित कवि की यह श्रेष्ठ कृति है।

(२०) " प्रज्ञा चक्षुनां प्रज्ञा बिन्दु " - १९४२

इस काव्य संग्रह में प्रकीर्ण लघु २७ गीत हैं। इसका प्रकाशन सन्

१९४२ में हुआ था ।

सन् १९४२ की फरवरी से सन् १९४२ के जून तक कवि को वाध्य होकर शारीरिक आराम करना ही पडा । अत्यंत श्रम के कारण वांई आंख में मोतियाविंद पक गये थे । और आपरेशन कराया था । दाहिनी आंख में मोतिया-विंद पका नहीं था । इसलिये डाक्टरों ने पढने लिखने के लिए पूर्ण रूप से निषेध किया था । लेकिन कवि का विद्याव्यसन और साहित्य सेवा का ध्येय गतिशील होने के कारण उन्होंने अपनी बंद आंखों से इस लघु अवधि का सदुपयोग किया । वे मुंह से बोलते थे । और उनके मित्र लिखते थे । इस प्रकार वह १७ लघुगीतों की रचना हुई । कवि ने अपनी ऐसी अवस्था विशेष के कारण उसका शीर्षक " प्रज्ञा चक्षुना प्रज्ञा बिन्दु " रखा । इन गीतों में भक्ति परक तीव्रता और भावनाओं का उद्रेक है ।

(१) आंख छतां अंधारुं :

इस गीत में आंखों का तारा जो बहुत मूल्यवान है उसका मूल्यांकन किया है । बिना उसके सब अंधेरा है ।

(२) रे डोलरिया :

इस गीत में कवि ने हरि से बडी तीव्रता से प्रार्थना की है कि तुम मेरे मन रूपी मंदिर में जरुर पधारना, तुम्हारे बिना मेरा मन मंदिर सूना है ।

(३) कांकरिया सरोवरे श्रीजीनी नौका :

इस गीत में श्रीजी की नौका का प्रभाव व्यक्त किया है ।

(४) अंजनी अने भगवती :

इस गीत में कवि की पौत्री अंजनी और उसकी बाल सखी भगवती की

बाल लीला का वर्णन है। ये दो सखियां बचपन में साथ रहती थी। खेलती थी और जब बडी हुई तब दोनों किस प्रकार बिछड गई उसका वर्णन है। कवि को ये दोनों बालिकाएं अत्यंत प्रिय थी।

(९) मांडवामां :

इस गीत में कवि ने अपनी पौत्रियां लग्न के मंडप में इकत्र हुई थी और हर्षोल्लास करती थी, उसका वर्णन है।

(६) ब्रह्म। ब्रह्मांडे उतरो :

इस गीत में ब्रह्म से प्रार्थना की है कि मानवों के दुःखों को दूर करने के लिये तुम ब्रह्मांडमें उतरो।

(७) फूल च्यो :

इस गीत में विकसित और सौरभित फूलों का मूल्यांकन किया है।

(८) नव ज्योत जगत :

इस गीत में सूर्यदेव को, जगत की नव ज्योत से संबोधन कर उसका महत्त्व प्रतिपादन किया है।

(९) लाडलीनी वेल :

इस गीत में कवि ने अपनी लाडीली पौत्री की बाल लीला और विकास का वर्णन किया है।

(१०) अमरवेली :

इस गीत में कवि ने लग्न की भावना से संबंधित " अमरवेली " का वर्णन करतेहुए लग्न जीवन के आदर्श और दिव्यता से वह किस प्रकार झुकी है, यह बतलाया है।

(११) सागर संवरो :

इस गीत में लग्न के बाद विदा होती लाडिली पुत्री को पिता उचित सीख देता है। उसका वर्णन है +

(१२) म्हारी फूलवेली :

इस गीत में यह बतलाया है कि वसंत ऋतु के कारण सब प्राकृतिक सौंदर्य विकसित है, एक मेरी फूलवेली को ही वसन्त का अनुभव नहीं हुआ है।

(१३) मानवता मुलाहासथी मोहयनो :

इस गीत में कवि ने मुख्य दो बातें कही है : (१) संसार-शुभ शुकनों से शोभित है। (२) मनुष्य की मानवता प्रसन्न मुख से सत्कार करने में है।

(१४) सोहागण :

इस गीत में सौभाग्यवती स्त्री का आदर्श श्री शोभा और दिव्यता का वर्णन है।

(१५) काल प्रभुनो वधावो :

इस गीत में कालप्रभु का स्वागत करके जिन स्वजनों का निधन हुआ है कवि उन्हें याद करता है।

(१६) नगरना नरमणि :

जामनगर में रहनेवाले नर-रत्नों - जामसाहबजी, हालार, जाडेजा, आदि मानवों की प्रशंसा की है वे मोती के समान दिव्य और चमकदार थे।

(१७) अष्टक :

इस गीत में श्री द्वारिकाधीश प्रभु की प्रार्थना है। यह प्रार्थना

अष्टक है ।

(१८) तेजना वाघा :

हरि को अलग अलग प्रकार के शृंगार से सजाये जाते थे । इन " वस्त्रो को वाघा " कहते है, हरि के ये वाघे बडे तेजस्वी और ओजस्वी है ।

(१९) हरिवरना पाय पडघा :

इस विश्व में हरि की ध्वनि प्रतिध्वनि बाह्य जगत में सुनाई पडती है । इससे उस हरि का प्रभाव लक्षित होता है ।

(२०) हरिने ओवारे :

यह विश्व हरि का घाट है और कवि उस घाट पर खेलता हुआ बालक है यह भावना इस गीत में व्यक्त की है ।

(२१) भूली पडी :

एक ग्वालन नंदराजा का मकान ढूंढते ढूंढते रास्ता भूल गई थी । कोई उसे मार्ग बतलाता नहीं था । कृष्ण से मिलने की उसकी तीव्रता का वर्णन है ।

(२२) नगरलोकनी परमेश्वरी :

इस गीत में कवि ने नारी गौरव का मूल्यांकन करते हुए " नारी " को नरलोकनी परमेश्वरी कहा है ।

(२३) महाभारत कारज करवा :

इस गीत में कृष्ण का मानवसेवा भावी रूप बतलाया है । कृष्ण गोकुल से मथुरा गये थे वे दिव्य और बडे काम करके मानव सेवा करने के लिये गये थे ।

(२४) अग्निहोत्री :

यह गीत एक लघु रूपक है। ब्रह्मांड है और परब्रह्म अखंड अग्नि जलाकर बैठे है। और वेदमन्त्रों का उच्चार करके उसमें इंधन का हवन करते हैं।

(२५) मानव मोरला :

रण में जो वीर विजय प्राप्त करते हैं वे मोर की तरह प्रसन्न रहते हैं। प्रसन्नता वीरता के पूर्ण प्रतीक के रूप में बतलाई है।

(२६) अनन्ता गौरव गीत :

इस गीत में परब्रह्म जो अनंत है उसका यशोगान किया है।

(२७) जगतन्त्र :

यह गीत आधुनिक युगपरक है। इसमें प्रजा प्रजा स्वतंत्र हो ऐसा जगतन्त्र रचो ऐसी प्रभु से प्रार्थना की है। इसमें प्रजा का राज्य होना चाहिए इसके प्रति संकेत है।

(२८) गगन घडाका :

यह गीत उपदेशात्मक है। पूर्ण विश्व में क्रान्ति और अशांति फैली हुई है। इसलिए हे मानव तू धर्मधुरन्धर देशरक्षक और साहसी वीर बनना।

(२९) रण डंका :

यह शौर्य गीत है, इसमें वीरों को प्रोत्साहन दिया है।

(३०) राजकोट :

इस गीत में ऐतिहासिक शहर राजकोट का महत्त्व बताते हुए उसका

महत्त्व बताते हुए उसका गौरव और वैभव भी बतलाया है ।

(२१) अवनीनां अक्षयपात्र :

यह एक समाजवादी गीत है, यह धरतीमाता अक्षयपात्र है, इसलिए हे मनुष्य, तू लूट, खसोट, छीनाझपटी, क्यों करता है । इस पृथ्वी पर फैला हुआ प्राकृतिक सौंदर्य भी अछूट है ।

(२२) संग्राम चौक :

यह गीत चार पदों का एक मंडल है, इसमें कवि ने जगत-संग्राम-परक चार पद रचे हैं । इसमें यह बतलाया है कि आज के मानव ने संस्कार और संस्कृति के बंधनों को तोडे हैं और मानव और देवता की दिव्यता भी त्याग दी है । मानव, दानव, और पशु बन गया है । इसलिये जैसे कौरवों के विनाश के लिए कृष्ण की आवश्यकता थी उसी प्रकार आज भी कौरवों जैसे मनुष्यों के विनाश के लिये कृष्ण की आवश्यकता है ।

(२३) दूधवाला :

इस गीत में एक ग्वालन जो दूध लेकर बेचने जाती है उसका चित्रात्मक शैली में वर्णन किया है । उसका मौलिक सौंदर्य उसकी चाल वेशभूषा आदि का वर्णन है ।

(२४) श्रीजी घाटे :

जिस घाट पर श्री स्वामीनारायण जी स्नान करने जाते थे, उस घाट पर सब मिल कर साथ में चले और श्रीजी के चरणों में वंदन करे यह गीत भक्तिपरक है ।

(२५) वसन्तनी वीजळी :

इस गीत के माध्यम से कवि ने यह बतलाया है कि वसन्त के प्रभाव से

स्त्री किस प्रकार कायिक, वाचिक और मानसिक रीति से प्रभावित होती है। उद्दीपन के रूप में इसका वर्णन है।

(१६) आनन्द देशना आनन्दियां :

इस गीत में यह बतलाया है कि जब मनुष्य को आनंद प्राप्त होता है तब उसे किसी की भी न्यूनता नहीं खटकती। वह श्रेष्ठ, दिव्य और महान बन जाता है।

(१७) वसन्त :

इस गीत में माघ शुक्ल पंचमी याने वसंत का प्रभाव नई प्रेरणा, नया जोश और नयी रचना के बारे में बतलाया है। प्राकृतिक-सौंदर्य भी नया जीवन प्राप्त करता है, अतः मानव आशा, उत्साह, प्रेरणा, प्राप्त करें।

इस संकलन में भक्तिपरक गीत -१२, भक्तिपरक - २, ३, ६, १५, १७, १८, १९, २०, २१, २४, २६, २४ : (१२)

व्यक्तिपरक गीत : ४ - १, ४, ९, १६ : (४)
प्रकृतिपरक गीत : ३ - ७, ८, १२ : (३)
वीरता परक गीत : ३ - २५, २८, २९ : (३)
वर्णन परक गीत : ६ - ५, १०, १३, १५, २६, २७ : (६) गीत हैं।
लग्न परक गीत : ४ - १०, ११, १४, २२ : (४)

अर्थात् कवि की लेखनी हरेक क्षेत्र में प्रवाहमयी है।

(२१) कुरुक्षेत्र :

कवि के मन में एक बात सदैव बनी रहती थी वह थी महाकाव्य की रचना जिसके फलस्वरूप कवि ने कुरुक्षेत्र महाकाव्य की रचना की। इसमें कुल १२

बारह कांड हैं जिसका नामकरण और संस्करण निम्न लिखित है :-

प्रथम काण्ड	युग पलटो	सन् १९२६
द्वितीय काण्ड	हस्तिनापुरना निर्घोष	सन् १९३०
तृतीय काण्ड	निर्धार	सन् १९४०
चतुर्थ काण्ड	योगपर्वणी	सन् १९२८
पंचम काण्ड	प्रतिज्ञा	सन् १९२८
षष्ठ काण्ड	आयुष्यनां दान	सन् १९४०
सप्तम काण्ड	चक्र व्यूह	सन् १९४०
अष्टम काण्ड	मायावी सन्ध्या	सन् १९२९
नवम काण्ड	सहोदरनां बाण	सन् १९४०
दशम काण्ड	रौद्री अथवा काळनो डंको	सन् १९३०
एकादश काण्ड	शर शय्या	सन् १९२३
द्वादश काण्ड	महासुदर्शन	सन् १९२७
समन्त पंचक	—	सन् १९४०
महाप्रस्थान	—	सन् १९४०
अर्पण अने प्रस्तावना	—	सन् १९४०

इस प्रकार अलग अलग समय पर लिखे गये १२ काण्ड और समन्त पंचक महाप्रस्थान अर्पण और प्रस्तावना मिलाकर कुल १०७०१ चरणावली का लिखा हुआ यह महाकाव्य है।

कुरुक्षेत्र की कथा द्यूत-क्रीडा में पराजित पाण्डवों के वन-वास से आरम्भ होती है। प्रथम काण्ड का शीर्षक युग-पलटो दिया गया है जिसका आरम्भ वन-वास काल में सुभद्रा द्वारा अभिमन्यु को लेकर अपनी मां के घर जाने की अवस्था से होता है। कुन्ती ने विदुर के घर में आश्रय लिया। सुभद्रा द्वारा यह करुण-कहानी सुनकर कृष्ण, पाण्डवों को धैर्य बंधाने के लिए आते हैं। द्वितीय काण्ड

का शीर्षक " हस्तिनापुरना निर्घोष " दिया गया है । पांडव वनवासकी तेरह वर्षीय अवधि बिता कर उपप्लव्य गांव में आते हैं । तदनन्तर श्रीकृष्ण कौरवों को समझाने के लिए हस्तिनापुर जाकर कौरवों से मिले । मार्ग में जनता द्वारा श्रीकृष्ण के स्वागत तथा कौरवों से पूर्व उनके कुन्ती से सादर मिलने की घटना भी वर्णित है । कौरवों और कृष्ण के वार्तालाप का वर्णन महाभारत की कथा के अनुसार ही है । प्रयत्नों की असफलता देख कर श्रीकृष्ण ने इसके अवश्यम्भावी परिणाम की बात धृतराष्ट्र, गांधारी, द्रोण तथा भीष्म आदि सब से कही, किन्तु इनके समझाने पर भी दुर्योधन न माना । अतः कुन्ती और विदुर से मिल कर वे युद्ध के दृढ़ निश्चय के साथ पाण्डवों के पास लौट जाते हैं । काण्ड का अन्त कुन्ती के इस सन्देश से होता है कि " पार्थ से कहो, वह अब शर-सन्धान करे । " यह युद्ध-घोष काण्ड के शीर्षक के अनुरूप ही है ।

तृतीय काण्ड में पाण्डवों के साथ श्रीकृष्ण के विचार-विमर्श का वर्णन है जिसमें उन्होंने कुन्ती माता का सन्देश सुनाया । द्रौपदी ने भी पाण्डवों का आह्वान इस प्रकार किया :-

" महाबाहो । युगनां आव्या छे आमंत्रण
योधराजो - आ तो छे कुरुक्षेत्र ना न्होतरां "[1]

द्रौपदी की वाणी सुनकर बलराम युद्ध की अनिवार्यता की कल्पना करके अत्यंत दुःखी हुए और श्रीकृष्ण से अनुमति लेकर वे सरस्वती के तीर्थों की ओर चले गये । इतने में कौरवों की ओर से युद्ध के आह्वान से भरा हुआ एक पत्र जो कि बाण से लिपटा हुआ था, आया जिसमें लिखा था :-

" योध पगले अमे जइये छीए
अश्व पगले आवजो कुरुक्षेत्र "[2]

---

1 कुरुक्षेत्र, तृतीय काण्ड, पृ० ३८ (2) वही, पृ० ४५

प्रतिक्रिया स्वरूप भीम ने गर्जना के साथ " वेणी-संहार " की प्रतिज्ञा याद की और सभी पाण्डव भी उत्साह में आ गये। सात अक्षौहिणी सेना को इकत्र करके पाण्डवों ने श्रीकृष्ण की पूजा वन्दना के पश्चात् जयघोष किया जिसकी प्रतिध्वनि कौरवों के शिविर तक पहुंची। दुर्योधन को इस बीच यद्यपि अपशुकन हुए, तथापि वह युद्ध की भावना से डिगा नहीं। अर्जुन ने रथ पर गाण्डीव धारण करके दुर्गा-स्तोत्र का पाठ किया और देवी का आशीर्वाद प्राप्त कर रण-भूमि में जा पहुंचा।

चतुर्थ काण्ड महाभारत के प्रथम दिवसीय युद्ध से सम्बद्ध है जिसमें दोनों सेनाओं के प्रभावपूर्ण वर्णन के पश्चात् अर्जुन के मोह को प्रस्तुत किया गया है। तदनन्तर युधिष्ठिर भीष्म पितामह की वन्दना करके विजय का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं और उधर भीष्म अर्जुन को " पार्थ, प्रथम बाण पुत्र का "। इस प्रकार आशा देकर घोर शंखनाद करते हैं।

पंचम काण्ड में युद्ध के तृतीय दिन की कथा है जिसमें भीष्म गरुड-व्यूह की और अर्जुन अर्धचन्द्राकार व्यूह द्वारा युद्ध आरंभ करते हैं। भीम द्वारा दुर्योधन की छाती में प्रहार से वह मूर्च्छित हो जाता है। चेत आने पर वह पितामह को भला-बुरा कह कर तीव्र युद्ध के लिए उत्तेजित करता है। भीष्म आश्वासन देकर भयंकर संग्राम आरंभ करते हैं और शस्त्र धारण के लिए श्रीकृष्ण को विवश कर देते हैं। यहां पर भीष्म द्वारा श्रीकृष्ण की वन्दना अत्यंत ही भावपूर्ण शब्दावली में प्रस्तुत की गई है।[1]

षष्ठ काण्ड में भीष्म की शर-शय्या की कथा है। वे युधिष्ठिर को अपनी मृत्यु का रहस्य बताकर एक प्रकार से " आशीष का दान " करते हैं जोकि काण्ड का शीर्षक भी है। शिखंडी को आगे रख कर पितामह पर शर-सन्धान द्वारा

---

1 कुरुक्षेत्र, पंच काण्ड, पृ० १०

अर्जुन उन्हें रथ से नीचे गिरा देता है। इसमें शर-शय्या तथा पितामह को पार्जन्यास्त्र द्वारा पृथ्वी से जल निकाल देने की घटना " महाभारत " की भाँति ही है।

सातवाँ काण्ड सुप्रसिद्ध चक्रव्यूह की कथा का है। जिसमें वीरता-पूर्वक लड़ते हुए अभिमन्यु वीरगति को प्राप्त करता है। काण्ड का अन्त अर्जुन द्वारा जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञा से होता है।

आठवाँ काण्ड का शीर्षक " मायावी सन्ध्या " कवि की मौलिक काव्य-चेतना एवं कल्पना शक्ति का परिचायक है। इसमें जयद्रथ वध, द्रोणाचार्य का वध तथा अश्वत्थामा के मायावी युद्ध का वर्णन है। तीनों ही घटनायें महाभारत की भाँति ही है।

नवम काण्ड की कथा कर्ण-पर्व के युद्ध से सम्बन्धित है। पूर्वार्द्ध में भीम और दुःशासन का युद्ध और भीम द्वारा दुःशासन का रुधिर पान तथा उत्तरार्द्ध में कर्ण और अर्जुन का युद्ध वर्णित है। ये घटनाएं महाभारत के अनुसार ही है। किन्तु कर्ण-वध में कवि ने अपनी भक्ति-भावना का सन्निवेश कर दिया है। रथ का पहिया धंस जाने पर अर्जुन अंजलिक नामक शर का सन्धान श्रीकृष्ण का भक्ति-पूर्वक स्मरण करते हुए करता है जिससे अंततः कर्ण वीरगति को प्राप्त होता है।

दशम काण्ड महाभारत के अठारहवें दिवस के युद्ध की विषयवस्तु को लिए हुए है। निराश दुर्योधन कर्ण-वध के उपरान्त भी अपनी हार नहीं स्वीकार करता। तदनन्तर शल्य और युधिष्ठिर का युद्ध, शल्य वध, दुर्योधन का पलायन, भीमसेन द्वारा सरोवर को घेरना तथा युद्ध के लिए ललकारना, भीम-दुर्योधन युद्ध तथा कौरवराज का वध आदि का वर्णन है। अंत में संजय ने धृतराष्ट्र को दोनों सेनाओं के शेष बचे केवल दस महारथियों का समाचार सुनाया।

ग्यारहवें काण्ड में युधिष्ठिर का राज्याभिषेक होता है। वे धृतराष्ट्र आदि की समुचित व्यवस्था करते हैं। तदनन्तर कृष्ण की प्रेरणा से पाण्डव

शर-शैय्या पर आसीन भीष्म पितामह के पास जाते हैं और वे युधिष्ठिर को राजधर्म का उपदेश देकर स्वर्गलोक को प्रयाण करते है। बारहवें काण्ड में युधिष्ठिर की ग्लानि का बडा ही सजीव चित्रांकन हुआ है जिसमें व्यासमुनि जीवन और मृत्यु का रहस्य उन्हें समझाते हैं।

तेरहवें काण्ड में द्वापर की समाप्ति, कलियुग का प्रारंभ आदि वर्णन करके आर्यवंश का यशोगान किया गया है।

इस यशोगान में कवि न्हानालाल ने सांस्कृतिक महापुरुषों की परम्परा का स्मरण गौरव के साथ किया है। यह कहा जा सकता है कि यहां कवि समकालीन राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित है।

चौदहवें काण्ड में पाण्डवों का महाप्रस्थान है। अपने राज्यकाल में युधिष्ठिर ने मानव-सेवा, का उच्च आदर्श प्रस्तुत किया है, उसे प्राचीन कथानक को आधुनिक परिवेश में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास कहा जा सकता है। तदनन्तर उत्तरा द्वारा परीक्षित के लालन पालन, कृष्ण द्वारा ५६ करोड यादवों के विनाश के साथ अपनी लीला का संवरण तथा द्रौपदी सहित पाण्डवों के हिमालय महाप्रयाण के वर्णन के साथ यह महाकाव्य समाप्त होता है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि " कुरुक्षेत्र " का कथानक मूलतः तो पौराणिक ही है किन्तु कवि ने उसमें आधुनिक युग के राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जागरण की चेतना को भली-भांति सन्निविष्ट किया है।

(२२) द्वारिका प्रलय : (१९४४)

इस खंड काव्य का प्रकाशन सन् १९४४ में हुआ, जिसका प्रणयन कुरुक्षेत्र के १२ (बारह) काण्डों की समाप्ति के पश्चात् मित्र रमणलाल के आग्रह पर आरम्भ हुआ। द्वारिका प्रलय की कथा श्रीमद् भागवत के एकादश स्कंध के पहले और तीसवें अध्याय में है। इस कथा भाग का बीज वहीं से प्राप्त किया है। कवि

ने सिद्धपुर की तीर्थ जनता समक्ष कृष्णजीवन का सार्वजनिक भाषण दिया। प्रवचन के अंत में यदुसंहार देहोत्सर्ग द्वारिका प्रलय। सकल जगत् प्रवाह काल के प्रवाह में बह रहा है। जन्म और मृत्यु के समय पुरुषार्थ निर्बल रहता है। ऋषि शाप तो निमित्त है, यादवों को ऋषि का शाप हुआ था। वह तो एक निमित्त था। यदुसंहार देहोत्सर्ग द्वारिका प्रलय के कारणों का मुख्य कारण तो यह था कि श्री कृष्ण का घोर निर्धार था कि जब तक १६ करोड यादव हैं, तब तक भूमिका भार दूर नहीं हुआ है। अवतार का समग्र हेतु सिद्ध नहीं हुआ है। यह उनकी दृढ प्रतिज्ञा थी कि स्वयं द्वारा पालित और प्रवर्द्धमान यादवों का महासंहार भी उन्होंने अपने हाथों से ही किया। इतिहास में ऐसा उदाहरण मिलना कठिन है। पंक्तियां द्रष्टव्य हैं :-

" कृष्ण एज संहारकर्ता ए तो एक ब्रह्मांडनो
सरजनहारोने संहारनहारो ब्रह्मांड नाथ "[1]

यादवों ने नटस्वांग किया। नर होकर नारी का स्वांग लिया। वेशभूषा भी उसीके अनुरूप। अपांग व्यंग करके स्त्री की तरह वे देखने लगी। वे ऋषि के पास गयी। ऋषि समझ गये और शाप दिया जिसके फलस्वरूप द्वारिका प्रलय हुआ। इसमें कवि ने इतिहास और कल्पना का सुंदर समन्वय किया है।

(११) हरि संहिता, भाग-१-२-३ : (अपूर्ण)

कवि न्हानालाल का यह अंतिम और विराट काव्य है। यह प्रेमलक्षणा भक्ति का यशोगान है। भारतीय मनीषियों की मान्यता है कि कृष्ण की आयु ११५ या १२५ मानी जाती है। कुरुक्षेत्र के महाभारत के समय उनकी आयु ८४ वर्ष की थी। इस विराट काव्य में कुरुक्षेत्र के बाद की कथा है। महाभारत में यह आता है कि युद्ध के लगभग ४० वर्ष बाद कृष्ण का देहोत्सर्ग हुआ

१ न्हानालाल, द्वारिका प्रलय, पृ० १४

और पांडवो ने हिमालय प्रस्थान किया। कवि के अंतर में स्वाभाविक विचारों की परंपरा जागृत हुई कि महाभारत युद्ध के बाद देहोत्सर्ग तक कृष्ण ने क्या किया ? जिसके फलस्वरूप कवि ने इस विराट काव्य की रचना की। इस यात्रा में कवि ने अपने साथ यादव परिवार और अर्जुनसुभद्रा को लेकर भारत की तीर्थयात्रा के लिये निकल पडे। जिन जिन तीर्थस्थानों ने अपना महत्त्व खो दिया था उनको नई उज्ज्वलता प्रदान की। इस विराट काव्य में १०० से ११६ वर्ष तक तीर्थयात्रा का भारत परिक्रमा का कृष्ण का इतिहास है। जैसे भागवत के १२ स्कन्ध है, वैसे इसके बारह मंडल है। भागवत में ४४००० चरणावलियां हैं। इसमें सिर्फ २७००० पंक्तियाँ कवि लिख सके और उनका यह पुनित कार्य अधूरा रह गया। कवि कहते है -

> हरिसंहिता छे म्हारी विशाळी वैष्णवतानुं महागीत। हमणां मिलाय नहीं, एटलुं वरसे छे ने लणाय नहीं एटलुं उगे छे। जगत माने जनमाने " हरिसंहिता " में लखी नथी, युगपुरुषे लखावी छे। हरिसंहिता तो छे दायकाओना परिपाक नो सार संभार।[1]

कवि ने श्रीकृष्ण के माध्यम से अनेक जगहों पर ज्ञानवाणी का प्रवाह प्रवाहित किया है जिसे पढकर सामाजिक प्रभावित होते हैं।

कवि ने ६१ वर्ष की आयु समाप्त की थी वहां तक गुजराती साहित्य को प्रेम और भक्ति के गीतों से भर दिया। दाम्पत्य प्रेम को ही कवि ने सर्वश्रेष्ठ माना। एकदिन कवि समुद्र के तट पर बैठे थे। दुर दुर की क्षितिज रेखा पर उनकी दृष्टि पडी। दूर क्षितिज से जैसे बंसरी की आवाज सुनाई दी। यह सुनकर कवि के मन में कृष्ण से मिलने की तीव्र भावना जागृत हुई। दर्शन के अभाव में विरह की वेदना जागृत हुई पंक्तियां द्रष्टव्य है -

" हरिवर हरिवर करी ठहुकारा

---

१ न्हानालाल, हरिसंहिता, भाग-१, प्रस्तावना, पृ० १२

હરિસંહિતા નો પ્રવાસમાર્ગ

(હરિસંહિતા ના નક્શા ઉપરથી)

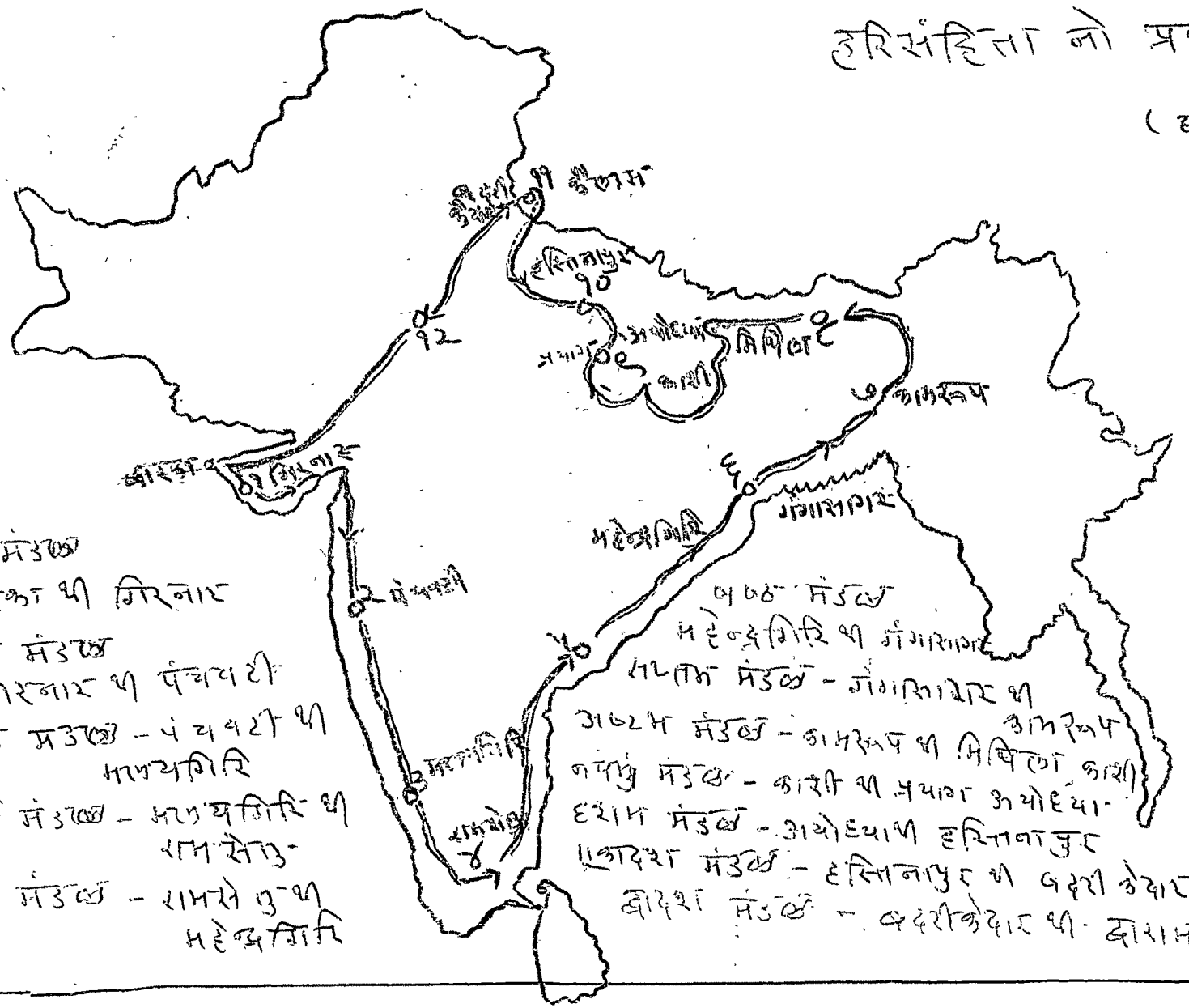

પ્રથમ મંડળ
દ્વારકા થી ગિરનાર

દ્વિતીય મંડળ
ગિરનાર થી પંચવટી

તૃતીય મંડળ - પંચવટી થી મલયગિરિ

ચતુર્થ મંડળ - મલયગિરિ થી રામસેતુ

પંચમ મંડળ - રામસેતુ થી મહેન્દ્રગિરિ

ષષ્ઠ મંડળ
મહેન્દ્રગિરિ થી ગંગાસાગર

સપ્તમ મંડળ - ગંગાસાગર થી કામરૂપ

અષ્ટમ મંડળ - કામરૂપ થી મિથિલા કાશી

નવમું મંડળ - કાશી થી પ્રયાગ અયોધ્યા

દશમ મંડળ - અયોધ્યા થી હસ્તિનાપુર

એકાદશ મંડળ - હસ્તિનાપુર થી બદરી કેદાર

દ્વાદશ મંડળ - બદરીકેદાર થી દ્વારામતી

७	सप्तम् मंडल	गंगासागर से कामरूप
८	अष्टम् मंडल	कामरूप से मिथिला, काशी
९	नवम् मंडल	काशी से प्रयाग, अयोध्या
१०	दशम् मंडल	अयोध्या से हस्तिनापुर
११	एकादश मंडल	हस्तिनापुर से बद्रीकेदार
१२	द्वादश मंडल	बद्रीकेदार से द्वारामती

तुलना तथा निष्कर्ष :

द्वितीय अध्याय में निर्दिष्ट किया जा चुका है कि दोनों कवि प्रेम, सौन्दर्य एवं प्राकृति प्रेम के कवि थे। दोनों के इतिहास की पुर्ण अभिरुचि थी। प्रसाद जी ने जिस प्रकार आख्यानक, प्रकृतिपरक, राष्ट्रीय भावना परक प्रेम और सौंदर्यपरक कविताएं लिखी उसी प्रकार कवि न्हानालाल ने भी उन क्षेत्रों में हाथ बंटाया। उदाहरणार्थ प्रसाद जी की काव्यकृति चिन्ताधार के समकक्ष न्हानालाल की काव्यकृति - केटलाक काव्यो - भाग १-२ - है। कानन कुसुम के समकक्ष चित्रदर्शनो और केटलाक काव्यो भाग २ है, " प्रेम पथिक " के समकक्ष वसंतोत्सव उतरता है। महाराणा का महत्त्व के समकक्ष न्हानालाल के काव्यों में वर्णित अनेक प्रकार के शौर्यगीतों की सृष्टि हुई है। उदाहरणार्थ - " राजपूतानी काव्य त्रिपुटि " में रणगीतों,

न्हाना न्हाना रास भाग-१ - खम्मा वीराने, विदाय वीरांगना, वीराने वधामणां

चित्रदर्शनो - " राजवीर ", " कठियाणीनुं गीत "

महेरामणमां मोतो - " अलबेलो आज युद्धे रे लोल "

" झरना " के समकक्ष " केटलाक काव्यो भाग-१ " " पारेवडां " और "चित्रदर्शनो " के कुछ गीत " शरदपुनम ", " ताजमहल " और गीत मंजरी के गीत क्रमांक

५ " अमे अखंड यौवननी मूर्तिओ "

१२ " अहो ! प्रेमना परिमले प्रकाशतुं "

२० " जरी ते शान्त रूना धार "

" आंसू " विरह काव्य के समकक्ष " ओज अने अगर " को रखा जा सकता है ।

दोनों में भाव साम्य और वस्तु साम्य है ।

लहर के प्रकृतिपरक गीतों के समकक्ष " महेरामणना मोती "

" प्रभावकुना प्रभाबिंदु " के गीत और " चित्रदर्शनो " में शरद पुनम, चारुवाटिका, फूलडां कटोरी आदि अनेक गीत हैं ।

प्रेमपरक गीतों के अनुरूप गीतमंजरी, केटलाक काव्यो भाग-२, सोहागण, पानेतर, न्हाना न्हाना रास भाग १-२-३ है ।

आत्मपरक - प्रसादजी के आत्मपरक गीत दुःखपूर्ण है क्योंकि १२ वर्ष के बाद उनका पूरा जीवन दुःखमय बीता । न्हानालाल जी के आत्मपरक गीत सुखपूर्ण है क्योंकि उनकी गृहस्थाश्रम की यात्रा पूर्ण सुखमय थी ।

प्रसाद जी के भक्तिपरक गीत विनय, विभो, शारदीय महापूजन, मकरंद विन्दु, १० मुक्तक छंद, दास्या, उपासना, आत्मनिवेदन, आदि विस्तृत है ।

न्हानालाल के भक्तिपरक गीत - परम प्रेम परब्रह्म, एक ज्वाला जले तुज नयनमां, सागरने, अहालेक, घंटारव, जीवनमां वर्ष, एक व्यर्थ याचना, हरि दर्शन, वेणु विहार आदि अनेकों विस्तृत हैं ।

प्रकृतिपरक गीत - प्रसाद - " शारदीय शोभा " के अंतर्गत प्रभात, रजनी, चन्द्र, शरद पूर्णिमा, चन्द्रोदय, इन्द्र धनुष, उद्यानलता, प्रभात कुसुम आदि अनेकों गीत विस्तृत हैं ।

प्रकृतिपरक गीत - न्हानालाल - शरदपूनम, वासन्वाटिका, गुर्जरी कुंजो, म्हारो मरणसो, सागरने तीर, परिम्हे प्रकाशतुं चंपानुं फूल, वसन्तमां सखि, चन्द्रमा, भीणा भीणा मेह, मोगरानी वेल, शतदल पद्म, सन्ध्याने सरोवरे, वडलो अणमोल फूलडां आदि अनेक गीत भरे पडे हैं।

प्रेमपरक गीत : संयोग श्रृंगार - दाम्पत्य स्तोत्रो, सोहागण, पानेतर
वियोग श्रृंगार - ओज अने अगार

इसके सिवा अनेक फुटकल प्रेमपरक गीत केटलाक काव्यो भाग-१-२ और न्हाना न्हाना रास भाग-१-२-३, चित्रदर्शनो, गीतमंजरी, महेरामणनां मोती आदि काव्य ग्रंथों में प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

सौन्दर्यपरक गीत :

" प्रेम " और सौन्दर्य ये दो हृदय की महत्त्वपूर्ण और परस्पर आश्रित भावनाएं हैं। जहां प्रेम है वहां सौन्दर्य है और जहां सौन्दर्य है वहां प्रेम है अतः उपरोक्त प्रेमपरक गीत सौन्दर्य परक भी हैं।

प्रवृत्तिगत उपर्युक्त साम्य के होते हुए भी दोनों कवियों की निजी चेतना, संस्कार एवं अभिव्यंजना-प्रणाली अपना स्वतंत्र महत्त्व रखते हैं जिनका विस्तृत अध्ययन अगले अध्यायों का विषय है। यहां संक्षेप में उनकी परस्पर भिन्न प्रस्तुत करने वाली काव्य कृतियों की विषय-वस्तु की संक्षिप्त चर्चा की जा रही है।

कवि न्हानालाल की काव्य-कृतियों की संख्या तथा परिमाण की कवि प्रसाद की अपेक्षाकृत अधिक है। न्हानालाल का दीर्घजीवी होना भी उक्त आधिक्य का एक कारण माना जा सकता है। द्वितीयतः प्रसाद की गम्भीर प्रकृति, दार्शनिकता एवं रुचि भी उनके कृतित्व को एक निश्चित दिशा एवं गरिमा प्रदान करती है। कवि न्हानालाल में सहजता एवं ऋजुता अधिक है। एक ओर

तो, उनकी प्रबन्ध-कृतियां ऐतिहासिक एवं पौराणिक हैं जो दूसरी ओर छोटे-मोटे अनेकविध प्रसंगों को लेकर प्रस्तुत हुई हैं। छोटा-मोटा प्रसंग या घटना समक्ष आई कि उन्होंने काव्य-रचना कर डाली। प्रसाद की परवर्ती रचनाओं के अनुशीलन से यह स्पष्ट है कि उनके कृतित्व में कला-साधना की महती सजगता, गंभीर अध्ययन और चिन्तन और कामायनी में तो उसके साथ ही ऐतिहासिक खोज दृष्टिगोचर होती है। इन विशेषताओं के सन्निवेश के लिए श्रम और प्रतिभा दोनों अपेक्षित हैं और उनके कारण कृतित्व पर्याप्त समय की भी अपेक्षा रखता है। कवि न्हानालाल की कृतियों के ~~परिमाण~~ परिमाणाधिक्य का यह दूसरा कारण भी साधार ही कहा जायगा। प्रसाद के काव्यों में विरह, करुणा आदि प्रवाहित है। न्हानालाल के काव्य सुख और वैभवप्रधान है। न्हानालाल को रास, रासडा, गीत आदि में अधिक अभिरुचि थी। न्हाना न्हाना रास भाग-१-२-३ इसी विषय से संबंधित है। प्रसाद ने प्रारंभ में ब्रजभाषा में रचनाएं की बाद में उनकी रुचि, मुक्तक, प्रगीत, और क्रमशः महाकाव्य की ओर मुड़ी प्रसाद जी की रुचि काव्य की आत्मा में रमती थी। बाह्य उपकरण में नहीं जिसके फलस्वरूप उन्होंने, झरना, आंसू और लहर की रचनाएं की।

न्हानालाल का वैवाहिक जीवन पूर्ण रूप से सुखी था और पत्नी का पूर्ण आश्रय आजीवन मिलता रहा। गृहस्थाश्रम के तीव्र आनंद के उद्रेक में उन्होंने तीन काव्य ग्रन्थ लिखे - " दाम्पत्य स्तोत्रों ", सौहागण "," पानेतर " और कैटलाक काव्यो, चित्रदर्शनों में भी कुलयोगिनी, सौभाग्यवती, लग्नतिथि, आदि काव्य लिखे। दाम्पत्य जीवन के अतिरेक में वे प्रतिवर्ष अपनी लग्नतिथि मनाते थे। कवि प्रसाद का गृहस्थ जीवन उनसे भिन्न था। अतः जहां न्हानालाल गार्हस्थ-रस के कवि है, वहां प्रसाद प्रेम, सौन्दर्य, करुणा और जीवन के प्रसाद तत्त्व के कवि है।

न्हानालाल ने स्वर्गीय पिता के प्रति, गुरु के प्रति, भाई के प्रति काव्य में प्रशस्तियां भावपूर्ण रीति से चित्रात्मक शैली में गाई है क्योंकि उनका

जीवन बहिर्मुखी था । प्रसाद जी का जीवन अंतर्मुखी था । उनको परम निकट के स्वजनों के निधन की परम्पराएं छोटी उम्र में ही दुर्भाग्य से देखनी पडी । तीव्र करुणा की सहनता के कारण वे अपने भाव अंतर में ही व्यक्त करते थे । वे अपने करुण भाव काव्य में अवतरित नहीं कर सके । शायद यह उनकी वृत्ति के अनुकूल नहीं था ।

न्हानालाल के " कुरुक्षेत्र " महाकाव्य के बारे में अनेक शंकाएं हैं । इसमें कुरुक्षेत्र के युद्धपरक वर्णन के साथ साथ सामाजिक और राष्ट्रीय भावनाएं भी उभारी गयी है । बाह्य आवरण से यह महाकाव्य-सा लगता है जैसे इसमें द्वादश काण्ड है, रस वीर रस है, यहीं कहीं करुण रस भी आ जाता है आदि । इसमें प्रेम और सौंदर्य का पूर्णतः अभाव है और रचना भावात्मक न होकर इति-वृत्तात्मक और उपदेशात्मक है । इसके विपरीत कामायनी महाकाव्य ही नहीं अपितु बीसवीं शताब्दी की एक मध्यतम उपलब्धि है । आधुनिक युग के परिप्रेक्ष्य में महाकाव्य के पूरे तत्त्व - उदात्त विचार, उदात्त कथानक - आदि इसमें मिलते है । इसमें द्विअर्थी कथा रूपकत्व लिये हुए है । इसमें दार्शनिक विशेषताएं भी है । न्हानालाल के कुरुक्षेत्र में इन सब उपकरणों का पूर्ण अभाव है । यह निस्संकोच स्वीकार किया जा सकता है कि कुरुक्षेत्र जैसी उनकी कृतियां परिपाटी में भले ही विशाल हों किन्तु गुणवत्ता के दृष्टिकोण से देखा जाय तो वे " कामायनी " जैसी कृति न दे सके ।

कृष्ण की तीव्र भक्ति भावना से प्रेरित होकर न्हानालाल ने अपने काव्यों को " भक्ति " का परिधान पहनाया जैसे - प्रेमभक्ति भजनावली, हरिदर्शन, वेणुविहार, फुटकल भजन आदि ।

प्रसाद परम शिव भक्त थे उन्होंने " कामायनी " में शिव के तांडव नृत्य का वर्णन एक घटना विशेष के रूप में किया है लेकिन अन्य काव्यों में जैसे " झरना, लहर " में नियति - " विश्व की महान नियामक शक्ति " - में विश्वास रख कर अपनी पूज्य भावनाएं व्यक्त की है जो सर्वग्राही है ।

प्रसाद अपनी अन्तिम काव्यकृति " कामायनी " लिख कर खूब प्रसन्न हुए थे और उन्हें आत्म-संतोष प्राप्त हुआ। कवि न्हानालाल इस प्रकार के आत्मसंतोष से वंचित रहे क्योंकि उनकी लिखी " हरिसंहिता " अपूर्ण ही रही और उनका निधन हुआ। उनके पिता दलपतराम की भी यही करुणता थी कि वे " हरिलीलामृत " काव्य ग्रंथ पूरा नहीं कर सके थे।

प्रसाद का जीवन " कामायनी " समाप्त होने पर ही पूर्ण हो गया। इससे आगे वे बढ नहीं सके। न्हानालाल ने श्रीमद् भागवत् के आधार पर लेकिन सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाते हुए विराटकाव्य हरि-संहिता लिखी इसमें कृष्ण को ही केन्द्र मानकर उनका राजनीतिज्ञ का नहीं लेकिन समाजसुधारक, मानवसेवाभावी और राष्ट्रीय स्वरूप बतलाया है। इस विराट काव्य में कवि रचित द्वादश मंडल का यात्राक्रम है जो विवेच्य कृति " हरिसंहिता " के अंतर्गत बतलाया गया है। कृष्ण ने दो कारणों से यह यात्रा की थी : (१) महाभारत युद्ध में जो आसुरी बल वातावरण जागृत हुआ था उसे दूर करना, और (२) भारत के तीर्थ स्थानों को भव्यता और दिव्यता प्रदान करना। कवि प्रसाद ने ऐसा विराट काव्य नहीं लिखा है लेकिन न्हानालाल ने " हरिसंहिता " में निर्देशित किये हुए मानवतावादी तत्त्वों का वर्णन प्रसाद की मुख्य कृति " कामायनी " में यत्र तत्र सुवासित पुष्पों की तरह बिखरे पडे हैं। यदि हिन्दी की आधुनिक युगीन काव्य धारा के सन्दर्भ में कवि न्हानालाल की इस प्रबन्ध कृतियों पर विचार करें तो ये द्विवेदी युगीन परिवेश के अधिक निकट कहे जा सकते हैं। प्रसाद की उपर्युक्त रचनाएं परवर्ती छायावाद-युग की चरम उपलब्धि है। ऐसे दो भिन्न क्षेत्रों के कवियों के कृतित्व के साम्य की अपेक्षा करना वस्तुतः उनके निजी कवि-व्यक्तित्व की उपेक्षा ही कहा जायगा। इस भिन्नता को लक्ष्य करते हुए प्रस्तुत तुलना में लेखक का उद्देश्य किसी कृतीकार को छोटा-बडा सिद्ध करना नहीं है। वस्तुतः इस तुलना द्वारा हम दो महाकवियों के सर्जन जाति के विविध आयामों तथा उनके वैशिष्ट्य का अनुशीलन कर सकते हैं।

द्वितीय अध्याय के निष्कर्षों में हम लक्ष्य कर चुके हैं कि कवि के स्वभाव-संस्कार और उनके व्यक्तित्व के विकास की निजी प्रवृत्तियाँ किसी प्रकार कृतित्व के नियमन में कार्यशील हो सकती है। प्रस्तुत अध्याय में इन कवियों की समस्त काव्य-कृतियों के अनुशीलन से हम सहज ही इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि प्रसाद और न्हानालाल के पूर्वनिर्दिष्ट स्वभाव, संस्कार, रुचियां, अध्ययन और अध्यवसाय एवं साथ ही उनके भिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं पारिवारिक सभी जीवन-पक्षों के परिवेश उनके कृतित्व को एक निश्चित दिशा प्रदान करते आये हैं। इस अनुशीलनगत आधार पर उनके काव्य के भाव-पक्ष के साथ समुचित न्याय किया जा सकता है जो कि परवर्ती अध्याय का विषय है।

०००००